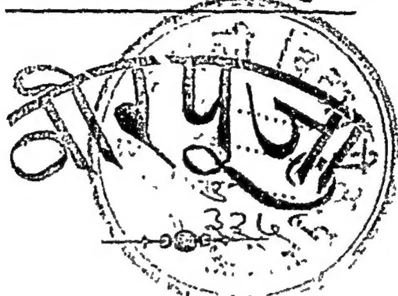


प्रकाशक :-पन्नालाल सिंघई।

भारतगौरव ग्रन्थमालाकी ६ ठी पुस्तक.



(बंग भाषाके सुप्रसिद्ध लेखक बा० हरनाथ वसुकी बंगला 'वीर पूजा' का अनुवाद)

अनुवादक,

पं० रूपनारायण पाण्डेय.



प्रकाशक.

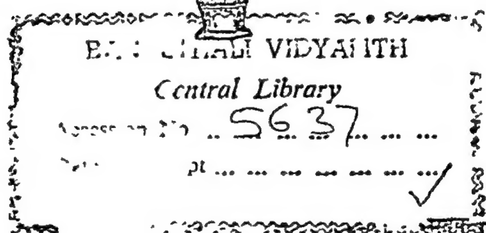
पन्नालाल सिंघई,

६३, लोअर चीतपुर रोड कलकत्ता।

द्वितीय संस्करण] जनवरी १९२३ मूल्य १॥)

प्रकाशक:—
हिन्दी पुस्तक भण्डार
६३, लोअर चीतपुर रोड,
कलकत्ता।





मुद्रक
रिखबदास वाहिती
"दुर्गा प्रेस"
नं० ४, चोरबगान,
कलकत्ता।

समर्पण

सेवामें

श्रीमान् बाबू छोटेलालजी जैन।

महोदय !

आप साहित्य तथा इतिहासके प्रेमी और सहृदय हैं। प्रकाशकपर आपका निःसीम स्नेह है, इन सब महान कारणोंसे यह तुच्छ भेंट आपको समर्पित करता हूं। आशा है आप इस भेंटको स्वीकृत कर आभारी करेंगे।

प्रकाशक—

नाटकके पात्रगण.

(पुरुष)

औरङ्गज़ेव..................भारत सम्राट्
क़ासिमखाँ..................भारत सम्राट् का सेनापति।
राजाराम....................महाराष्ट्रपति।
तानाजी.....................वृद्ध सेनापति।
सन्ताजी.....................तानाजीका पुत्र
रङ्गनाथ.....................राज्यच्युत सामन्तराज
गोवर्द्धन.....................देशत्यागी वङ्गाली।
अमीर-उमरा,मरहठा अष्ट प्रधान और मन्त्रीगण, खोजा, पहरेदार, दूत, सर्दार, ग्रामवासी आदि।

(स्त्री)

जहानारा.....................औरङ्गज़ेवकी वहन।
लक्ष्मीवाई या सूरजवाई......रङ्गनाथकी स्त्री।
वासन्ती.....................रंगनाथकी ख़रीदी हुई कन्या
चण्डी वाई.....................राजारामकी भावज
नाचनेवाली आदि

॥ ॐ ॥

वीरपूजा

पहला अंक.

पहला दृश्य।

[स्थान—पहाड़ी क़िला, राजाराम अकेले]

राजा०—(स्वगत) यही वह पहाड़ी क़िला—पूज्यपाद पिताका पवित्र विजयस्तम्भ है! इस जगहसे सारा दक्षिण देश स्पष्ट दिखाई देता है, लेकिन जो पहले देख चुका हूँ; वह अब नहीं है। कालके प्रवाहमें वह अतीत गौरव धीरे धीरे न जाने कहाँ बहा जा रहा है। अलक्ष्यके रूपमें भविष्यके गर्भसे एक धुंधले पर्देने आकर सारे महाराष्ट्र देशको छा लिया है। उस बहुत दूरपर स्थित बीजापुरकी विराट गोली गुम्बजकी आकाशको छूती ऊंची चोटीपरसे राजाओंका विजय झण्डा हट गया है; वह जयोन्मत्त बादशाहके असंख्य सिपाहियोंकी उल्लासपूर्ण जयध्वनिको भेद्कर हजारों प्रजाओंका करुण आर्त्त-

नाद सुनाई दे रहा है; उन अगणित किसानोंके गाँवों और महाराष्ट्र देशके असंख्य घरोंमें विलासिता अपना अधिकार जमा रही है। वह महाराष्ट्रपति शम्भाजी संभोगसागरमें तैरते हुए महाराष्ट्र देशकी स्वाधीनता बेचने जा रहे हैं! वह घरके शत्रु रंगनाथ विलासके रँगमें रंगकर, अपनेको भूलकर, स्वजातिका सर्वनाश करनेके लिये शत्रुके शिविरमें अतिथि हुए हैं! माता अष्टभुजा, महाराष्ट्रवासियोंके हृदयमें बल दो—शंभाजीकी रक्षा करो।

(चण्डी बाईका प्रवेश)

चण्डी०—रक्षा की है!—राजाराम, इस समय क्या तुम इस निर्जन पहाड़पर विश्राम करोगे?

राजा०—क्यों, क्या हुआ?

चण्डी०—तुमसे कहनेसे क्या कुछ फल होगा? महाराष्ट्र-वासियोंके इस दुर्दिनमें तुम तो खूब निश्चिन्त बैठे हो!

राजा०—निश्चिन्त नहीं हूं, रानीजी, चिन्तासे जर्जर हो रहा हूं। छत्रपति शिवाजीका पवित्र रुधिर हृदयमें रखकर राजाराम कभी निश्चिन्त नहीं बैठ सकता। दुश्चिन्ताके दारुण तुषानलमें दिन-रात जला करता हूँ। अस्थि मज्जामें, मेदेकी ग्रन्थियोंमें, नस नसमें अव्यक्त वेदनाका अनुभव करता हूँ। चारों ओर हताश पुरुषोंकी लम्बी सांसें छूट रही हैं—स्थिर मैं कैसे हो सकता हूँ रानीजी? बताओ, रानीजी, भाईजीका हाल क्या है?

चण्डी०—सब कहूँ—तुम्हारे बड़े भाई साहब मार डाले गये

हैं; ये देखो—अपनी भावजके रंड़ापेके चिन्ह देखो! किन्तु देखो, हाथमें मौतकी साथिन तेज की हुई कटारी है!

राजा०—धैर्य धरो रानी जी!

चण्डी०—धैर्य धरनेका उपाय अब नहीं है राजाराम! धैर्य धरा नहीं जा सकता। जानते हो, पिशाच मुगलोंने किस तरह उनकी हत्याकी है? ओफ! गर्म लोहोंकी छड़ोंसे उनकी दोनों आँखें निकाल ली गईं! (कांपकर) मर्मभेदी यातनासे छटपटाते छटपटाते मेरी आँखोंके आगे मेरे इष्ट देवके जीवनका अन्तिम दृश्य समाप्त हुआ है। उस ज्वालाके ऊपर यह जुल्म हुआ कि पिशाच लोग मेरी गोदीसे मेरे प्यारे बच्चे शाहूको छीन कर भाग गये। अन्तको मुसलमानके डेरेमें जानेसे क्या हुआ सो देखो (छातीमें कटार मारकर गिर पड़ती है)—राजाराम! अगर तुम महात्मा शिवाजीके पुत्र हो, तो ब—द—ला—लेना।

(मृत्यु)

राजा०—यह क्या हुआ, यह क्या सुना! माता अष्टभुजा, यह क्या किया! कैसा सर्वनाश हो गया! अब यहाँ नहीं ठहरूंगा, वह बड़े भाईकी चिताकी आग, पवित्र हवनकुण्डकी आगकी तरह दूरसे मुझे बुला रही है। भाईके खूनका बदला लूंगा, शत्रुकी पुरीमें, आग लगाऊंगा, महाराष्ट्र जातिके घर घरमें शक्तिका सञ्चार करूंगा, कराली कालीके मन्दिरका पवित्र खड्ग शत्रुके रक्तसे रंग दूंगा। मुगलोंके हाथ धर्म नहीं बेचूंगा—माके दूधको कलङ्कित न होने दूंगा। (प्रस्थान)

दूसरा दृश्य।

(स्थान—रंगनाथकी बाहरी बैठकका सामनेका हिस्सा
वासन्ती अकेली खड़ी गाती है।)

अपार सुखसे सुखी; नाथ मुझको किया।
अनन्त रूपसे आंखोंको मेरी भर जो दिया॥
प्रभो, प्रवाहित करुण-प्रवाहसे मेरा—
हृदय तुरत भर जाता कभी जो नाम लिया॥
हृदयके नाथ! हृदयमें तुम्हें रखूं हरदम।
चरण शरणमें जगह दो; तुम्हें हृदय है दिया॥

वासन्ती-(स्वगत) खरीदी हुई लड़कीको पिताजी कितना प्यार करते हैं! क्यों इतना प्यार करते हैं?—लो मैं भूली जा रही थी; दीनानाथ प्यार कराते हैं; इसीसे प्यार करते हैं। लेकिन मेरे पिताजी सब समय दीनानाथको पकड़े नहीं रह सकते। वह जैसे ही अपने और राज्यके बारेमें सोचते हैं—सहायताके लिये मुगलोंके साथ सलाह करते हैं—वैसे ही दीनानाथ उनके पाससे खिसक जाते हैं। दीनानाथके क्या एक यही काम है? मेरे ऐसे कितने ही दुखी कङ्गाल राह राह रोते फिरते हैं; उनके सिवा उन्हें उठाकर और कौन गोदमें लेगा?

(रंगनाथका प्रवेश)

रंगनाथ-कौन किसे गोदमें उठा लेगा बेटी?

वासन्ती—आप-आप मुझे गोदमें नहीं उठा लेंगे?

रंगनाथ—बेटी, मैंने तो तुम्हें बहुत दिन हुए जब गोदमें उठा लिया था।

वासन्ती—फिर क्यों मुझे बीच बीचमें गोदसे फेंक देते हो?

रंग०—यह कैसी बात है, मैं तुमको फेंक देता हूँ! इस दुःखपूर्ण जीवनमें कुछ शान्ति देनेके लिये भगवानने तुम्हें मेरे पास भेज दिया है।

वासन्ती—तो फिर क्यों तुम उन भगवानको भूल जाते हो पिताजी! भगवानको भूलते ही मुझे भी भूल जाओगे। भगवानका नाम दीनानाथ है। दीनानाथको भूलनेपर फिर दीनका खयाल रहेगा?

रंगनाथ—पगली लड़की, ये सब बातें तुझे किसने सिखाई हैं?

वासन्ती—क्यों, दीनानाथने सिखाई हैं!—देखो पिताजी; तुम अब उन लोगोंसे मत मिलो जुलो।

रंगनाथ—किन लोगोंके साथ?

वासन्ती—उन्हीं लोगोंके साथ जिनसे रात दिन सलाह करते हो—उन्हीं मुगलोंके साथ। उन्हें अब अपने पास न आने दो। वे मेरे दीनानाथके दीन जनोंके ऊपर बड़ा अत्याचार करते हैं। जो प्राणके भयसे भागता है, उसके पीछे जाकर वे उसका सिर फाट डालते हैं। अहा; उनके रक्तसे रक्तकी नदी बह जाती है! मेरे दीनानाथने जिन जीवोंको इतने यत्नसे पैदा किया है, उन जीवोंकी हत्या करनेका मनुष्यको क्या अधिकार

है ? यह खून खराबी और मारकाट क्या उचित है ? पिताजी उनसे मेल मत रक्खो, बस—मेरी यही प्रार्थना है।

रंगनाथ—क्या करूं बेटी, मराठोंने मेरा राज्य छीन लिया है। इस समय मैं अकेला हूं; सम्पत्ति नहीं है, सेना नहीं है, अच्छी सलाह देनेवाला कोई आदमी नहीं है—कहाँ जाऊँ ? इसीसे बाप दादेके राज्यका उद्धार करनेके लिये उनसे भी बढ़कर बली, सारे भारतवर्षके सम्राट—औरंगजेबकी शरण गया हूं।

वासन्ती—उसके बाद अगर बादशाह युद्धमें जीते, और मराठोंके राज्यको लेकर खुद भोग करने लगे; उस समय तुम्हारा राज्य भी लूटके मालमें समझा गया; तब तुम क्या करोगे पिताजी ?

रंगनाथ--ना ना, यह क्यों होगा ? इसके भीतर एक भयानक राजनीतिकी बात है ! औरंगजेब हैं, भारतके शाहंशाह। मैं उनके अधीन राजा रहूंगा; उन्हें मालगुजारी देकर अपना राज्य प्राप्त करूँगा।

वासन्ती—और शाहंशाहका ऐरा-गैरा नौकर भी आकर तुमसे जिस तरह खड़े रहनेके लिये कहेगा उस तरह खड़े रहोगे, जिस तरह बैठनेके लिये कहेगा, उस तरह बैठोगे; खानेके लिये आज्ञा देगा तो खाने जाओगे; सोनेके लिये आज्ञा देगा तो सो सकोगे; तुम्हें खानगी हिसाब तक हुक्म पाते ही हुजूरमें दाखिल करना पड़ेगा; क्यों न ! वाहरे तावेदार राजा !



रंगनाथ—हाँ अधिकतर यही दशा होगी,—तो भी जानती हो—

वासन्ती—नौकरी वड़े नीचे दर्जेकी है—यही न! राज्य करना भी नौकरी है!

रंगनाथ—लेकिन इसके सिवाय और उपाय नहीं है। वाद्-शाहके सिवाय मैं और किसके पास जाऊं?

वासन्ती—क्यों; वादशाहसे वढ़कर जो राजाधिराज हैं; उन्हें खोजकर उनकी शरणमें क्यों नहीं जाते पिताजी!

रंगनाथ—वादशाहसे भी वढ़कर! कौन?

वासन्ती—वही मेरे दीनानाथ हैं।

रंगनाथ—हा हा हा...तू पगली है।

वासन्ती—मैं तो पगली हूं ही; पिताजी क्यों नहीं जरा पागल होकर उसका आनन्द देखते। अधिक वुद्धिमान होकर तो इतने दिनों तक देख लिया कि वुद्धिके जोरसे क्रमशः वाद्-शाहके गुलामके गुलामकी भी लाल आँखें देखनी पड़ती हैं, खुशामद करनी होती है। उसकी अपेक्षा तो एक वार पागल होकर मेरे दीनानाथके दरवारमें दुःख जताकर देखो तो क्या फल होता है!

रंगनाथ—सो क्या मैं जानता नहीं हूं वेटी!

वासन्ती—नहीं पिताजी, ठीक तौरसे तुम नहीं जानते।

रंगनाथ—तुम किस तरह जाननेके लिये कहती हो?

वासन्ती—देखो, भगवानको सलाह मत दो। यह मत

सिखाओ कि स्वामी! तुम यह करो यह नहीं करो; यह दो! उनसे कहो—दीनानाथ! मैं दीन हूं; तुम दीनोंके नाथ हो। मैं कुछ नहीं जानता; कुछ नहीं चाहता। यह शरीर तुम्हारा है, यह हृदय तुम्हारा है; मैं तुम्हारा हूं। मैं अपना नहीं हूं। सब तुम्हाराही है। तुम जो अच्छा समझो वही करो। उसीमें मेरा भला होगा।

रंगनाथ—देखो ये सब बातें बड़े तत्वज्ञानकी बातें हैं। पहले खुद चेष्टा करके देख लूं...इसके बाद भगवानके ऊपर भार है ही।

वासन्ती—समझ गई पिता जी; तुम मेरे दीनानाथको पकड़ कर नहीं रख सके। मुझे स्त्री जानकर तुम मेरी बात नहीं सुनते। अगर आज मेरी माता होती तो वह तुम्हारा हाथ पकड़कर; तुम्हें खींचकर दीनानाथके द्वारपर खड़ा कर देती। मेरी माताके अनुरोधको तुम टाल नहीं सकते। हां पिताजी; मैंने अगर पिता पाया था; तो एक माता क्यों न पाई?

रंगनाथ—यह बात तुम अपने दीनानाथसे क्यों नहीं पूंछतीं?

वासन्ती—पूछती तो हूं। सो वह कहते हैं कि तेरे मा है। हाँ पिताजी, दीनानाथकी बात तो झूंठ नहीं हो सकती। मेरी माता कहाँ हैं?

रङ्गनाथ—क्या जानूं बेटी। (घबराहटके साथ) जाओ बेटी, वह कासिम खाँ आ रहा है।

वासन्ती—(भयके भावसे) पिताजी! वही है वही। मुझे

बड़ा डर लगता है! मैं तुम्हारे पास रहूं पिताजी, तो फिर कुछ डर नहीं रहेगा।

रङ्गनाथ—नहीं बेटी! घरके भीतर जाओ। तुम्हारे दीनानाथ तुम्हारी रक्षा करेंगे।

(वासन्तीका प्रस्थान)

रङ्गनाथ—(स्वगत) देखता हूं, यह मायामयी बालिका धीरे-धीरे मुझे बन्धनमें बाँध रही है। अब अकेले मेरे प्यार और आदरसे उसे तृप्ति नहीं होती, माँको खोज रही है। ओफ! लक्ष्मी! तुम्हारे पिताने क्यों मेरे शत्रुका साथ दिया। नहीं तो आज तुम इस बालिकाको माताके स्नेहसे निहाल कर देतीं। तुम कहोगी, "उसमें मेरा दोष क्या था?—दोष पिताका था"। दोष—महादोष है, तुम रघुजीकी कन्या हो, यही तुममें महादोष है।

(कासिमका प्रवेश)

कासिम—आदाब राजा साहब! अभी आप किससे बातें कर रहे थे? वह औरत मुझे आते देखकर भाग गई-वह कौन है?

रङ्गनाथ—वह एक क्षत्रिय घरानेकी अनाथ लड़की है!—बचपनसे मेरे ही पास रहती है-मुझे पिता कहती है।

क़ासिम—हूँ, औरत तो बहुत खूबसूरत जान पड़ती है। आप चाहें तो उसे किसी बहुत बड़े अमीर उमरावकी बीवी बना दे सकते हैं। आपके ऊपर मेरी बहुत मेहरबानी है। आप काफिर हैं; फिर भी मैं आपको अपना दोस्त समझता हूं।



रङ्गनाथ—हूं...

क़ासिम—आप सोच क्या रहे हैं राजा साहब, कुछ खबर सुनी है ?

रङ्गनाथ—क्या !

क़ासिम—एक बड़ा गेंड़ा घायल किया गया है, आप रघुजी को जानते हैं ?-जागीरदार रघुजी ?

रङ्गनाथ—चौंककर ए'-ए'—हां जानता हूं, जानता था—हाँ-हाँ-नाम सुना है। उनका क्या हुआ ?

क़ासिम—एकदम काल। अपने हाथसे मैंने बहुतसी दौलत लूटी है। लेकिन असल दौलत हाथसे निकल गई। अफसोस कीजिये राजा साहब, अफसोस कीजिये।

रङ्गनाथ—रघुजी अन्तमें इस तरह मारे गये! उनके परिवारकी क्या दशा हुई ?

क़ासिम—उसके लिये कुछ चिन्ता न कीजिये राजा साहब! क़ासिम खाँ बड़ा ही रहम दिल है। वह रघुजीकी जोरू, लड़के वगैरह किसीको नहीं छोड़ आया। मैं सबको दोजख भेज आया हूं। उनसे दोजख़ गुलज़ार हो रहा होगा। लेकिन असल दौलत हाथसे निकल गई। अफ़सोस करो दोस्त, मेरे लिये अफ़सोस करो।

रङ्गनाथ—रघुजीके एक लड़की भी तो थी न ?

क़ासिम—वही तो कह रहा हूं दोस्त, उसकी सूरत ठीक परीकी ऐसी थी। हाथमें पाकर भी न पा सका, निकल गई।

ऐसी परीको अपने यहाँ दस्तखाना बिछाकर पेशावरी पुलाव और काबुली कोफ्ता नहीं खिला सका। उन नीलम ऐसी चमकीली आँखोंमें अपने हाथसे सुरमा नहीं लगा सका। अफ़सोस।

रङ्गनाथ—(स्वगत) जगदीश्वर धैर्य दो। दारुण राज्यकी लालसासे हारा हूँ; नहीं तो कभी लात मारकर दुश्मनकी छाती चूरकर देता।

क़ासिम–हाय हाय, वहिश्तकी हूर हाथमें पाकर भी उसे पा न सका! कौन जानता था कि ऐसे चेहरेके भीतर ऐसी शैतानी भरी पड़ी है?

रङ्गनाथ—क्यों क्या हुआ? उसने क्या किया?

क़ासिम–सुभान अल्ला; जैसे ही, "मेरी जान, प्यारी" कहता हुआ मैं सामने गया, वैसेही कुर्तीके भीतरसे एक कटारी निकालकर इस तरह मेरी तरफ़ झपटी कि उन खुले बालों को, लाल २ आँखोंको और कटारीकी चमकीली धारको देखकर मेरे हाथकी तलवार हाथसे छूट पड़ी। और मैं वैसे ही पीछे फिर कर लम्बा हुआ। दोस्त, मैं भागा, खूब भागा, मैं क़ासिमखाँ बहादुर, एक औरतके सामनेसे जान लेकर भागा।

रङ्गनाथ—(स्वगत) धन्य जगदीश्वर! और धन्य वीर बाला! कायर पतिकी स्त्रीको वासन्तीके दीनानाथने ही बचाया।

क़ासिम—क्या सोच रहे हो दोस्त?

रङ्गनाथ—सरदार बहादुर, एकाएक मेरे सरमें दर्द पैदा हो

गया है। आप अगर माफ़ करें तो मैं जाकर जरा आराम करूँ।

क़ासिम—अच्छा! मुझे भी दुनियाँ बिलकुल अँधेरी मालूम हो रही है। सेर भर शीराजी पिये बिना उस सोनेकी पुतली को नहीं भूल सकूंगा। आदाब। (प्रस्थान)

रंगनाथ—क्या करूँ? राज्यकी लालसा छोड़कर लक्ष्मीकी खोजमें निकलूं क्या? या यह क्यों करूं—वह मेरी कौन है? उसे मैं त्यागकर चुका हूं। उसका चेहरा तक मुझे याद नहीं है। मेरी ही याद क्या उसे बनी होगी? असम्भव है। अब उसके लिये ममता मोह क्या? उसके लिये अब मेरी ज़िम्मेदारी क्या? वह हिन्दूकी लड़की है? शायद अपने धर्मको आप बचा सकेगी। मुझे राज्य चाहिये। लेकिन तब भी हृदय क्यों चञ्चल हो रहा है? जिसे जाना-पहचाना नहीं, उसके लिये हृदय क्यों व्याकुल हो रहा है। तो क्या वह मुझे प्यार करती है? स्वामी चाहे त्याग कर दें, तो भी क्या स्त्री उसे नहीं भूलती? नहीं तो वह क़ासिमके ऊपर कटारी लेकर क्यों झपटती? किसके लिये वह भाग खड़ी हुई? किसके लिये उसने अनाथ कंगाल बनना कबूल किया?

(तानाजीका प्रवेश)

तानाजी—रंगनाथ।

रंगनाथ—आप कौन हैं?

तानाजी—पहचान नहीं सकते। मैं महात्मा शिवाजीका



सेनापति हूं। इस समय मेरे पैर चलनेमें लड़खड़ाते हैं; बाल पक गये हैं; मैं बुड्ढ़ा—बेकाम हो गया हूं। मेरा नाम तानाजी है।

रंगनाथ—तानाजी! आप यहाँ क्यों आये हैं?

तानाजी—तुमसे एक प्रश्न करनेको आया हूं।

रंगनाथ—कीजिये।

तानाजी—तुम बता सकते हो कि एक टुकड़ा जमीन बड़ी है या एक जान बड़ी है?

रंगनाथ—इस बातका अर्थ क्या है? समझमें नहीं आया।

तानाजी—राज्य बड़ा है या छत्रपतिकी सन्तान बड़ी है।

रंगनाथ—अब भी नहीं समझा।

तानाजी—साधारण राज्यके लिये राजेश्वरके प्राण लेना क्या मनुष्यका काम है?

रंगनाथ—यह प्रश्न आप मुझसे क्यों करते हैं?

तानाजी—शम्भाजीका सर्वनाश किसने किया है?

रंगनाथ—मैंने किया है?

तानाजी—हां, तुमने किया है।

रंगनाथ—कौन कहता है?

तानाजी—तुम्हारे काम कहते हैं, तुम्हारी अकीर्त्ति कहती है, तुम्हारा अधर्म कहता है, और कह रहे हैं ऊपरके ये ग्रह-तारागण, ये चन्द्र-सूर्य, ये सारे संसारके ईश्वर। याद रखो रङ्ग-नाथ, इतना पाप विधातासे नहीं सहा जायगा। तुम विश्वास-घातक न होते तो आज महाराष्ट्रदेशके भाग्य आकाशमें यह

घना काला बादल देख न पड़ता। वीर श्रेष्ठ क्षत्रपतिके कुलमें कलङ्ककालिमा न लगती। महाकाल गृह कलहका रूप रचकर महाराष्ट्र देश ध्वंस करने न आता, रायगढ़के दुर्भेद्य दुर्गकी सिंह-वाहिनी दुर्गाकी मूर्त्ति सुशोभित पताका आज मुग़ल-सेनापतिके पलंगकी चादर न बनती। रंगनाथ किस साहससे अनायास एक खण्ड पृथ्वीके लिये शम्भाजी और उनके परिवारका तुमने सर्वनाश कर डाला? छी छी! तुमने आप ही अपना सर्वनाश क्यों कर लिया?

रंगनाथ—तानाजी, मेरी तबियत ठीक नहीं है। आज्ञा दीजिये, मैं विश्राम करने जाऊं।

तानाजी—जाओ, तानाजी तुम्हारे यहाँ अतिथि होने नहीं आया। एक बात याद रखो, विश्राम तुम्हारे भाग्यमें नहीं बदा है। (प्रस्थान)

रंगनाथ—(स्वगत) सचमुच ही विश्राम मेरे भाग्यमें नहीं बदा है।

दृश्य तीसरा।

(स्थान—भीमा नदीका किनारा।)

(एक मराठा सिपाही अपने बाल सुखा रहा है। पीछेकी ओरसे गाते हुए गोवर्द्धनका प्रवेश)

गीत।

जोड़ तोड़ हैं काम निराला मेरा, उसमें मग्न रहूं।



यही ज़मींदारी है मेरी, और न कोई काम करूं ॥
जो राजोंका महाराज है, करें नौकरी उसकी,
तो क्या वह झखमारी है जो, मैं क्यों ऐसी बात सुनूं।
बारो मास रहूंगा सुखसे गाँजेपर दम मारूंगा,
षष्ठीका मैं दास, सेठका बच्चा, जरा न कच्चा हूं ॥
इसी पेड़के तले, हाथमें हुक्का लेकर बैठूंगा,
ठीक वही वंशीधर मोहन बनकर सबको दर्शन दूं ॥
मोहनभोग-मलाईका उपभोग खूब मैं जानूं जो,
हाथ लगाता नहीं, दूरहीसे मछलीको मैं पकड़ूं ॥
यह मेरा है खास तालुक़ा" यहाँ कभी कोई मुझपर—
कर सकता आईन न जारी, मस्त मौजमें रहा करूं ॥

गोव०—(स्वगत) निकम्मे बंगालमें खाली गंजेड़ियोंकी राग सुन पड़ती है। लोग कहते हैं कि काशीमें जानेसे फिर पेटके लिये चिन्ता नहीं रहती। झुण्डकी झुण्ड सुन्दरियाँ आकर ख़ूब ख़ातिर तवाज़ा करती हैं, रबड़ी मलाई सेरों खिलाती हैं, और आदरके साथ चम्पेकी कलीसी उंगलियोंसे चेतगञ्जके चतुर साहकी दूकानकी बढ़िया कई रुपये सेरकी तमाखू अपने हाथसे भर देती हैं। मगर काशीमें जाकर देखा, सब झूठ—एकदम झूठ है। न वहाँ कहीं रबड़ी मलाई है और न कहीं उन सुन्दरियोंका पता है। एक साली दही वाली आँखें मटका मटकाकर बातें ज़रूर करती है, लेकिन उसका रंग मुझसे भी अधिक सांवला है। जितनी गिनती याद थी, सब मन ही मन

कह गया, फिर भी उसकी उमर ठीक न कर सका। और उसके वदनपर जो मैली धोती थी, उसमें कैसी भयानक दुर्गन्ध-लहरें उठ रहीं थीं? राम, राम, विश्वनाथ जीते रहें, काशीके पैरोंमें दूर हीसे दण्डवत है। वहाँसे वृन्दावन आया, सोचा, महाप्रभुकी कृपासे मालपुआ, मधुकरी, सेवादासी वगैरह तो यहाँ मिलेंगी ही। पर वहाँका मामला और भी सत्यानाश देख पड़ा। मधुकरीके माने हैं द्वार द्वारपर भीख माँगना, और सेवादासीके माने हैं?—सालियोंकी उमरके पेड़ और पत्थर भी अब नहीं हैं, उसके ऊपर सबके सिरके वाल कटे हुए हैं—किसी किसीके सिरपर चोटी भी है। राधारानी! तुम अपना वृन्दावन आप लेकर रहो, मुझे छुट्टी दो, कहकरही गोवर्द्धन-प्रस्थान हो गया। अब इन मराठोंके देशमें आया हूं; देखूं कङ्गाल बंगाली यहाँ क्या भोजन पाता है। (बाल खोलकर सुखाते हुए सिपाहीको देखकर) "वामे शव शिवा कुम्भ" पहले ही शुभ यात्राका सगुन मिला। वाह वाह! कैसी बालोंकी बहार है! इस समय यहाँ पर कोई नहीं है, जरा बातचीत तो कर लूं। (पास जाकर प्रकट रूपसे गला साफ करके) मैं कहता हूं—हूं हूं हूं, सुनती हो—अजी प्रिये चन्द्रमुखी, जरा आँख उठाकर देख ही लो। मैं कहता हूँ, ओ हंसमुखी—मुक्तकेशी—

सिपाही—(चौंककर) कौन हैं रे?

गोवर्द्धन—(डरकर) ऐं यह क्या, यह क्या है बाबा? डाढ़ी है—यह तो अलकावलीसे भी लम्बी है, बाबा।

सिपाही—तुम कौन है, यहाँ क्या करता है ?

गोवर्द्धन—सन्नाटेमें आ गया है। तुमको—आपको-मुक्त-केश देखकर पागल हो गया था, लेकिन चन्द्रमुखमें मूछ-डाढ़ी देखकर एकदम थम गया—चौंक पड़ा—मुंहसे वात नहीं निकलती।

सिपाही—जल्दी वोल, तुम कौन है ?

गोवर्द्धन—हम तो गोवर्द्धन चक्रवर्त्ती हैं। मगर तुम कौन है ?—नर है या मादा है ? आपको हम चन्द्रमुखी कहेगा, या सिपाही साहव कहेगा ?

सिपाही—तुम क्या पागल हुआ है ?

गोवर्द्धन—माके पेटसे पैदा होते ही पागल नहीं था, लेकिन अभी आपके पीछेके लम्वे लम्वे वाल देखकर कुछ कुछ पागल हो गया था। उसके वाद आप जैसे घूमकर खड़ा हुआ—वैसे ही चन्द्रमुखीकी यह विचित्र घटना देखकर एकदम पागलखाने जाने लायक हो गया है।

सिपाही—तुम्हारा घर कहाँ है ?

गोव०—आप झाकड़द्रा-माकड़दा जानता है ?

सिपाही—नहीं, कौन जिला है ? झापड़ा-मापड़ा कौन जिला है ?

गोव०—जिला नहीं, जिला नहीं, वंगाल मुल्क जानता है ?

सिपाही—हाँ हां, वंगाल देशका नाम सुना है। वहाँका सव आदमी चावलका भात और मछली खाता है।

गोव०—हाँ, हम लोग तो चावलका भात खाता है, तुमलोग क्या लकड़ी चबाता है? कङ्कड़का भात खाता है?

सिपाही—क्या?

गोव०—और क्या? अच्छा मुक्तकेशीजी, अगर कुछ बुरा न मानो तो हम एक बात पूछता है।

सिपाही—बोलो।

गोव०-आप विषयकर्म क्या करता है?

सिपाही—क्या?

गोव०—क्या कामकर आपके दक्षिण हस्तका व्यापार चलता है?

सिपाही—हम सिपाही हैं 'जंगी'।

गोव०—तुम जंगली है, सो तो आगे पीछे जंगल देखकर ही हम समझ गया था। हम पूछता है, तुम काम क्या करता है? पेट कैसे भरता है?

सिपाही—और खानेकी क्या फिकर है?

गोव०—तो हमारे खानेका भी कुछ इन्तजाम कर दो।

सिपाही-हमारे साथ आओ, गोली चलावेगा?

गोव०—सो उसमें तो हम एकदम सिद्ध पुरुष है। एक आसनसे बैठकर हम दो-तीन घण्टेतक बराबर गोली चलाने सकता है।

सिपाही—तब तो तुम बहादुर है।

गोव०—हाँ, देशके अड्डामें मेरा नाम बहुत था—सो भाई

चन्द्रमुखीजी, मुझे बड़ी भूख लगी है,—इधर जमाइयाँ भी आ रही हैं, जल्दीसे कुछ खिलाओ।

सिपाही—चलो खाने-पीनेके बाद आजही कूच करेंगे। तुम भी साथ चलोगे।

गोव०—कहाँ?

सिपाही—लड़ाईमें।

गोव०—लड़ाई?

सिपाही—हाँ, वहाँ जितनी खुशी हो गोली चलाओ।

गोव०—इस देशमें अङ्गोंको क्या लड़ाई बोलता है?

सिपाही—हम तुमको क़वायद कसरत सब समझा देंगे।

गोव०—वह गोलीकी कसरत हम खूब जानता है। काशीमें हाथी फाटकके अड्डामें हम एक दिन बाजी लगाके दम मारा था, ऐसी जोरसे दम मारा कि "मारा जो दम चिलमसे, शरारे निकल पड़े"—दस बारह हाथ ऊँची लौ निकली थी।

सिपाही-वाहरे बहादुर। कलकी लड़ाईमें हम तुमको बन्दूक देगा, जितनी खुशी हो गोली चलाना।

गोव०—बन्दूक क्या होगी, हमारे पास तमञ्चा चिलम है।

सिपाही—अच्छा तुम अपने देशका ठिकाना हमको लिखाये जाओ।

गोव०—क्यों?

सिपाही-अरे भाई लड़ाईकी बात कौन कह सकता है?

तुम गोली चलाओगे तो दुश्मन भी चुपचाप नहीं खड़ा रहेगा। वह भी तो तुम्हारा सिर उड़ा सकता है ?

गोव०—क्या बोलता है ! अड्डामें क्या मार पीट होता है, मतवाला लोग आता है।

सिपाही–अरे मतवाला तो होता ही है। उस दिन छावनी से हम बारह सौ आदमी निकले थे, चार सौसे ऊपर लड़ाईके मैदानमें रह गया।

गोव०—ऐसा नाश हुआ—बूंद हो गया।

सिपाही—और नहीं तो क्या, लड़ते लड़ते जान दी, उनकी जान खलास हो गई।

गोव०–खलास क्या प्रसव ? जवान प्रसव होता है ? आश्चर्य है तुम्हारा देश बाबा ! दाढ़ीपर हाथ फेरता है, बड़े बड़े बाल भी रखता है और प्रसव भी होता है !

सिपाही–नहीं तो क्या ? ठिकाना दे जाओ, अगर लड़ाईमें मारे जाओगे तो तुम्हारे घरमें चिट्ठी भेज देंगे।

गोव०—'मारे जाओगे' क्या ?

सिपाही–एक लड़ाईमें नहीं मरोगे, दूसरी लड़ाईमें जाना होगा।

गोव०—हमारे चौदह पुरुषोंने भी युद्ध नहीं किया। हमको भी क्या तुमने राजपूत ठहराया है ? हम क्या सत्तू खाता है ? हम शौकीन बंगाली है, ललित लवंगलता है, बढ़िया महीन महीन चावलका भात खाता है।

सिपाही—अभी चलो, तीन पहरके बाद कूच करना होगा।

गोव०—ना दादा, हम छूट मारेंगें।

सिपाही—क्या मारेगा?

गोव०—छूट-छूट—चम्पत हो जायगा।

सिपाही--क्या, तुम भागेगा?

गोव०--नहीं तो क्या करेगा? हम मर नहीं सकेगा।

सिपाही—तब यहाँ काहे आया?

गोव०—दक्खिनी औरतें, बम्बईके आम आदिके आकर्षणमें खिंच आया, और तुम भी गोलीका लोभ दिखाया। साफ करके तो तुम पहले बोला नहीं, कि मनुष्य मारनेकी गोली चलाना होगा।

सिपाही—तो फिर अब क्या करेगा?

गोव०—और क्या करेगा दादा, सन्यासी होगा, औरतोंको बच्चा होनेकी और मर्दोंको जवान होनेकी दवा देगा।

सिपाही--अच्छा, तुम हमारे डेरेपर चलो, हम तुमको जवान बना देगा।

गोव०—क्या तुम जवान बनानेकी दवा जानता है?

सिपाही—दवासे नहीं, मंतरके बलसे।

गोव०—ऐसा मंतर जानता हैं?

सिपाही—और नहीं तो क्या?

गोव०—अच्छा, फिर जो बदा होगा वह होगा, तुम हमको जवान बना दो। सच बात तो यह है, मुक्तकेशीजीके यहाँ तो

हम 'ह्विश' करते ही गिर जाता है और मरनेसे पहलेही जैसे जान निकल जाती है, इससे समय समयपर बड़ी लज्जा होती है। तुम मंतर पढ़कर मुझे जवान बना दो।

सिपाही—यह देखो, हमारे साथ बात करतेही तुम्हारा सीना आगेसे भर आया है! आओ हमारे साथ (जाते जाते) आज और एक दुबला बल पाया और एक दुबला बल पाया।

(दोनोंका प्रस्थान)

दृश्य चौथा।



(स्थान—शिविरके भीतरका भाग।)

(राजाराम और एक प्रधान)

प्रधान—महाराज, अब और कितने दिन इस संन्यासीके वेशमें रहेंगे।

राजा०—प्रधानजी, इस वेशमें दोष क्या है?

प्रधान—जटाजूटके ऊपर क्या मुकुट शोभा पाता है।

राजा०—जटाके ऊपर अगर मुकुट शोभा नहीं सोहता तो मंत्रीजी मुकुटके गौरवकी रक्षा कैसे हो सकती है? बाहरी वेपसे न सही, जो भीतरसे सन्यासी नहीं हो सकता, उसके सिरपर कहीं राजमुकुट शोभा पाता है? जो विलासके धारा प्रवाहमें बह रहा है, जिसने इन्द्रिय सेवाके भावमें अपनेको डुबा रक्खा है, वह हजार राज्य मुकुट सिरपर धारण करनेपर भी



नरकके कीड़ेके सिवा और कुछ नहीं है। क्या तुमको चित्तौरके चिरसन्यासी महाराणा प्रतापके उस कठोर व्रत रखनेकी बात नहीं याद हैं? वह पत्तोंकी कुटोमें रहना, घासपर लेटना, पत्तोंमें खाना, वल्कल पहनना याद करो! अगर मुकुट पहनानेकी साध हुई हो तो उस आकाशकेशमण्डिता, दिगम्बरा, तीक्ष्णखड्ग-धारिणी महाशक्तिके सिरमें मणिमय रत्नमुकुट पहनाओ।

(तानाजी और सन्ताजीका प्रवेश)

तानाजी—कहे जाओ भैया, कहे जाओ! तुम्हारे इन अमृत मय वचनोंको सुनकर मैं अपने कान शीतल करूं। आहा, वह बहुत दिनोंकी बात है! उस समय यह शिथिल शरीर काम करने लायक था, इन दुर्बल बाहुओंमें बल था, इस हृदयमें आकांक्षा और उत्साह भरा हुआ था। दृष्टि मेरी धुंधली हो गई है फिर भी तुम्हारे मुखमण्डलपर उन्हीं महापुरुषकी ऐसी एक अपूर्व स्वर्गीय ज्योति स्पष्ट देख रहा हूं। उसके साथ ही इस निराश हृदयमें फिर आशा अङ्कुरित हो रही है, इस जीर्ण शरीर में जैसे नये बलका सञ्चार हो रहा है! समझाओ भैया, समझाओ—मरहठोंके घर घर जाकर समझाओ—बाहुबल नहीं है, वह पशु-शक्तिमात्र है। कौड़ीके कंगालसे लेकर करोड़पति तकको फिर स्मरण करा दो, कि रक्तपातसे केवल कसाईखानेकी उन्नति होती है, परपीड़नका परिणाम आत्मनाश ही होता हैं। महाराष्ट्र देशके निवासी जबतक यह बात नहीं समझेंगे, तबतक उनके मंगलकी कोई आशा नहीं हैं।

राजा०—वृद्ध सेनापति तानाजी, जातीय उन्नतिके इस महासत्यको भूलनेसेही आज दक्षिण देशकी यह दुर्दशा देख पड़ती है। प्रार्थना कीजिये कि माता अष्टभुजा मरहटोंके बाहुबलको छीनकर उन्हें धर्मबलसे बलवान् बनावें।

तानाजी—मैं माताके आगे मन-वाणी-कायासे सदा यही प्रार्थना करता हूं। भैया, अब मुझमें इतनी शक्ति नहीं है कि युद्धमें तुम्हारे साथ रह सकूं, इसीसे अपने इकलौते बेटेको तुम्हारे हाथमें सौंपने आया हूं। याद रखो, सन्ताजी हीन-वीर्य नहीं है।

राजा०—(सन्ताजीको गलेसे लगाकर) सहोदर भाईसे भी अधिक स्नेहपात्र समझकर मैं सन्ताजीको इस हृदयमें स्थान देता हूं।

तानाजी—सन्ताजी, पिताको विश्वासघातक न बनाना।

सन्ताजी—पिताजी, इस शरीरमें आपका रक्त, इस हृदयमें आपका उपदेश और इस चित्तमें ईश्वरके विश्वासके सिवा मुझे और सहारा नहीं है।

तानाजी—तुम्हारी तलवार, मेरा आशीर्वाद और ईश्वरकी भक्ति तुम्हें कर्तव्यकी राहमें अटल रखेगी। अब मैं निश्चिन्त हूं।

(प्रस्थान)

(नौकरका प्रवेश)

नौकर—राजा रंगनाथका दूत द्वारपर खड़ा है।

राजा—अच्छा ले आओ। (नौकरका प्रस्थान)

राजा—यही वह फुड़िया है, जान लेनेवाली नहीं है; मगर बड़ी जलन पैदा करती है।

(दूतका प्रवेश)

राजा—तुम रंगनाथके पाससे आये हो?

दूत—मैं दीन-दुनियांके मालिक, शाहंशाह बादशाह आलमगीरके गुलाम, अमीर उलमुल्क रिसालदार, दो हज़ारी मनसबदार—सिपहसालार साहब जंगी बहादुरके ख़ादिम गुलामके गुलाम राजा साहब रंगनाथकी तरफसे आपके पास आया हूं।

राजा—इतनी लम्बी चौड़ी व्यर्थ बातोंका क्या काम है? तुम्हारा मतलब क्या है, कहो।

दूत—राजा रंगनाथका राज्य आप लोगोंने छीन लिया है, इसीसे वह बादशाहके गुलाम सिपहसालार बहादुरके क़दमोंमें गिरकर बहादुर आदमीकी तरह रो रहे हैं। रहमदिल सिपहसालार साहबने इसीसे मेहरबानी करके मुझे यहाँ भेजा है। मैं भी बहुत इनायतसे दिल्लीका दौलतखाना छोड़कर आप लोगोंके इस ग़रीबखानेमें तशरीफ लाया हूं और आपको यह जताता हूं कि अगर अभी आप लोग राजा साहबका राज्य नहीं छोड़ देंगे तो बादशाही फौज आकर आप लोगोंके बच्चे, बूढ़े, जवान, औरत वगैरह सबको एकदम क़तल कर डालेगी। दुनियाँसे मरहठोंका नाम तक उठ जायगा।

राजा—शायद तुम्हारे सेनापति बहादुर अथवा उनके बादशाह यह अच्छी तरह जानते हैं कि मरहठोंका नाम मिटा देना

सहल बात नहीं है। दूत! सेनापतिको याद करा देना कि जिस तलवारका परिचय वह पहले पा चुके हैं, उसकी धार अब और भी तेज होगई है! (तलवार खींचते हैं)

दूत—(भयके मारे दूर हटकर) जाने दीजिये, रहम कीजिए, दूतको न मारना चाहिये, गुलिस्तांमें लिखा है, राम-भारतमें लिखा है।

राजा—डरो नहीं, मच्छड़ मारनेके लिए मरहठेकी तलवार नहीं निकली है। दूत! तुम अपने घमण्डी बादशाहसे जाकर कहो कि हिन्दुस्तानके लोहेमें बहुत अच्छा इस्पात होता है और कराली कालीके मन्दिरके जिस खड्गसे बकरेकी बलि दी जाती है, उसी खड्गसे नर बलि भी होती है। इसलिये अब वह अपनी तलवारका नाम लेकर न बलकें। अगर इस महाराष्ट्र देशको बलिदानके आँगनके रूपमें देखनेकी उन्हें विशेष अभिलाषा है तो जिस तरह अत्याचार चल रहा है, उसी तरह चलने दें। हम लोग भी स्मशानेश्वरी कराली देवीकी षोड़शोपचार पूजाका प्रबन्ध करेंगे।—मन्त्रीजी, जाओ, दूतको इनाम देकर विदा कर दो।

दूत—जी, कह तो चुका हूं कि दूतको मारना मुनासिब नहीं समझा जाता। [जाना चाहता है]

राजा—(हँसकर) डरो नहीं, हमलोगोंकी राजनीतिके कोषमें भाषाकी चालबाजी नहीं है। इनामके माने इनाम ही है और वह दूतको सब जगह मिलना चाहिए। (दूतका प्रस्थान)

[सन्हालगढ़के सरदार और सिपाहियोंका प्रवेश]

राजा—क्या ख़बर है, सरदार साहब ?

सरदार—उत्तरसे टिड्डीदलकी तरह बादशाहकी बेशुमार सेना आकर तमाम दक्षिण देशको छाये लेती है। और एक इससे भी बढ़कर बुरी ख़बर है।

राजा०—निःसंकोच होकर कहो।

सरदार—आपके बचपनके शिक्षा-गुरु, वृद्ध पुरोहित नीलकण्ठको मुग़लोंने बड़ी ही निष्ठुरताके साथ मार डाला है।

राजा—(कातर भावसे) नीलकण्ठ तो एक सदाचारी निरीह ब्राह्मण थे। माता अष्टभुजा! किस दोषसे ऐसे विशुद्ध ब्राह्मणकी हत्या हुई ?

प्रधान—आप व्याकुल और खिन्न न हों।

राजा०—खिन्न होनेका समय भी नहीं है, और मैं खिन्न हुआ भी नहीं हूं। देखते हो, ब्राह्मणका रक्तपात हुआ है—हम लोग जीवन-मरणके सन्धिस्थलपर पहुंच गये हैं! प्रबल बहिया की तरह मुगल-सेना झोपड़ोंसे लेकर महलतक ग्रसनेके लिये आ रही है। किस शक्तिके बलसे इस बहियाको रोकोगे ? हम केवल बाहुबलसे मुगलोंके समकक्ष नहीं हो सकेंगे—सब बलोंकी जड़ मानसिक बल चाहिये। मैं उसी बलका संग्रह करने, शक्ति रूपिणी सनातनकी आराधना करने, भैरवीके मन्दिरमें जाता हूं। जबतक काम पूरा न हो—कृतकार्य न होऊं, तबतक

तुमलोग आपसमें सौख्य, सौहार्द, सौजन्य और सद्भाव बनाये रक्खो।—जय माता अष्टभुजा की!

(सबका प्रस्थान)

दृश्य पाँचवाँ।

[स्थान—औरंगाबादकी सड़क]

(लक्ष्मीबाई अकेली)

लक्ष्मी—(आपही आप) अकेली हूं, इन लोगोंकी भारी भीड़में—इस अविराम चञ्चलतामें—इस मर्मभेदी कोलाहलके बीचमें अकेली हूं। इस विश्व—संसारके कार्यकारणकी अनन्त शृङ्खलामें मैं एक छोटीसी कड़ी हूँ। कौन मुझपर लक्ष्य करता है? संसारमें सम्बन्धहीन मुझ अकेली स्त्रीकी ओर कौन लक्ष्य करता है? कितनेहो नक्षत्रपात होते हैं, कितने ही इन्द्रपात होते हैं, कितनीही घातोंकी सृष्टि होती है, पर उधर कोई लक्ष्य नहीं करता; फिर मैं तो एक ऐसी स्त्री हूं—जिसकी किसीमें गिनती नहीं है। लेकिन यही मैं कैसे करती हूं? जिनकी इच्छाके विना एक पत्ता भी नहीं हिलता, उनका लक्ष्य तो मेरे ऊपर है! अगर ऐसा नहीं है, तो उस दिन उस नरपिशाचके हाथसे किसने मुझे बचाया?—माता महा शक्ति, मेरे हृदयमें विराजो, भैया तुम्हारी मंगलमयी शक्तिसे, तुम्हारी निरन्तर प्रवाहित करुणासे, इस हृदयका विश्वास अटल रहे। ऐसा होनेसे ही मेरा उद्देश्य सिद्ध

होगा, मैं अपने स्वामीको पाऊंगी। भैया, आशक्तिसे नहीं, भोगविलाससे नहीं, तुम्हारी राहमें साथ चलनेवाले एक साथीके रूपमें उन्हें पाऊँगी। मोहान्ध होकर उन्होंने मुझे त्याग दिया है, मोहान्ध होकर देवताके श्रीचरण छोड़कर दैत्यदलके पैरोंके नीचे आश्रय ग्रहण किया है। भैया, तुम्हारी ही शक्तिसे उनको मोहसे मुक्त करूंगी!

(गोवर्द्धनका प्रवेश)

गोवर्द्धन—राम राम भाई। नः, यह तो फिर लम्बे बाल देख पड़ते हैं!—भैया, तुम भी तो हमलोगोंके साथ आज वही कुछ करोगे न?

लक्ष्मी—तुम क्या मुझे मर्द समझते हो?

गोव०—खूब अच्छी तरह समझ रहा हूं। अब मैं कहीं धोखा खा सकता हूं। भाई साहब, तुम्हारी दाढ़ी कहाँ गयी, अभी तक निकली ही नहीं या मुँड़ा डाली है?

लक्ष्मी—तुम्हें देख नहीं पड़ता है, मैं स्त्री हूँ।

गोव०—तुम्हीं बताओ आँखोंके ऊपर कैसे विश्वास करूँ दादा! बहुतसे मरहठे भाइयोंको देखा है—तुम्हाराही ऐसा साफ चेहरा और पीठपर फैले हुए लम्बे बाल देख पड़े। लेकिन हाँ, तुम्हारे ऊपर संदेह जरूर हो रहा है। तुम्हारी आँखें उस तरहसे "खांव खाव" नहीं कर रही हैं। जैसे दोनों काली पुतलियोंके भीतर कुछ स्नेह और लज्जाका रंग झलक रहा हैं तो तुम अगर औरतही हो तो यहाँ अकेली क्या कर रही हो? यहाँ तुम्हारा कोई है?



लक्ष्मी—मेरे कोई नहीं है, मैं सन्यासिनी हूं।

गोव०—हाय हाय; मैंने भी सोचा था कि सन्यासी होऊं। लेकिन भैया अब सन्यासी होनेको जी नहीं चाहता। एक दफा इन मरहठे लोगोंके साथ मिलकर युद्ध कैसे किया जाता है; यह देख आऊँ। बहन, दीदी मेरा हो मन मुझे धिक्कार दे रहा है—क्योंकि मैं तुम्हें दीदी कहूँगा; बुरा तो न मानोगी?

लक्ष्मी—नहीं, अच्छा तो है कहो न। मेरे भी कोई भाई नहीं है; तुम भाई मिल गये।

गोव० —दीदी, तुम्हारी बातें बहुतही मीठी हैं! हाँ; वह जो कह रहा था कि मेरा ही काम मुझे बहुत धिक्कार दे रहा है। एक तो मैं भात खानेवाला बङ्गाली ठहरा, उसपर थोड़ीसी अफीम खानेका अभ्यास भी है। ऐरागैरा कोई भी आकर दम-कता है, और मैं धक्का देनेसे पहले ही धरतीपर पछाड़ खाकर गिर पड़ता हूं। इसीसे मैंने यह सोचा है कि भाग्यमें जो बदा होगा वही होगा, इन मरहठोंके दलमें शामिल होकर कुछ खा पीकर हृदयमें बल पैदा कर लूं।

लक्ष्मी—अच्छी बात है, मैं भी तुम्हारे लिये ईश्वरसे प्रार्थना करूँगी। लेकिन भाई; कभी अपने लिये कुछ न करना माताके लिये युद्ध करो।

गोव०—अरी दीदी; ऐसा कुपूत पैदा हुआ कि कभी माता-की सेवा नहीं कर सका। दीदी, अब माता कहाँ हैं, उनका तो स्वर्गवास हो गया।

लक्ष्मी—तुम्हें गर्भमें रखनेवाली माता नहीं हैं तो क्या हुआ; उनके सिवा और भी तो माता है। वह माता हम तुम सब लोगोंकी हैं!

गोव०—कौन, माता, दुर्गा? ओः! वह तो आप दस दस हाथोंसे लड़ती हैं; उनके लिये मुझे लड़नेकी जरूरत नहीं है।

लक्ष्मी—और तुम्हारा देश-तुम्हारी जन्मभूमि—क्या तुम्हारी माता नहीं है?

गोव०—देश? भाकड़दा माकड़दा।

लक्ष्मी—हाँ यह भी, उसके बाद तुम्हारा बंगाल देश, हमारा यह महाराष्ट्र देश भी तो माता है!

गोव०—यह लो दीदी, तुमने तो पागलपन शुरू कर दिया, देश कैसे माता है?

लक्ष्मी—माता नहीं है! हम आपको गर्भमें रखनेवाली माताकी गोदमें लेटाकर सयाने हुए; उसके हृदयका दूध पीकर इतने बड़े हुए; इसीसे तुम अपनी माताको आदर और स्नेहकी दृष्टिसे देखते थे। वह माता नहीं रही; अब किसकी गोदमें लेटते हो?

गोव०—दूर हो पगली, मैं बूढ़ा आदमी गोदमें क्या लेटूंगा, एक चटाई चटाई जो कुछ पाता हूं वही बिछा लेता हूं। कुछ नहीं मिलता तो जमीनपर ही लोट जाता हूं।

लक्ष्मी—अच्छा वह जमीन कहाँ की है—देश ही की तो है अब तुम्हीं बताओ तुम देशकी गोदमें नहीं सोते? चटाईका भी

न मिलना संभव है, लेकिन देशकी मिट्टी तुम्हारे लिये हर घड़ी गोद फैलाये हुए है।

गोव०—हाँ यह भी तो ठीक है! दीदी, तुम कुछ बुरा नहीं कह रही हो!

लक्ष्मी—उसके बाद देखो; माका दूध पीना तो न जाने कब तुमने छोड़ दिया था; अब काहेसे अपना पेट भरते हो?

गोव०—यही दाल-भात-रोटी आदि जो जब जुट जाता है उसीसे पेट भर लेता हूं; आज तो लड्डू खाकर ही दिन काट दिया है।

लक्ष्मी—देखो, माताकी छातीका रस जैसे दूध बनकर निकलता था, वैसेही इस देशकी छातीका रस धान, गेहूं आदि खानेकी सामग्रीके रूपमें क्या नहीं निकलता? इन्हीं चीजोंसे हम सब तुम पेट भरते हैं। पैदा होनेके बाद दो एक साल तो तुमने दूध पिया होगा, लेकिन उसके बाद अबतक क्या तुम इस देश माताकी छातीके रससे नहीं पल रहे हो? इस भारतकी धरती जीवन भर तुम्हें अपनी गोदमें नहीं सुलायेगी?

गोव०—वाह दीदी; तुमने तो सब पानीकी तरह साफ साफ समझा दिया। भाई! बेशक देशकी मिट्टी भी माता है! क्या कहूं मैं तुमसे अवस्थामें अवश्य बड़ा हूं, नहीं तो तुम्हारे चरणोंकी रज अपने मस्तकमें लगा लेता;

लक्ष्मी—तुम मेरे दादा हो; बस मुझे जी भरकर आशीर्वाद दो।

गोव०—दीदी, सन्यासिनीको क्या कहकर आशीर्वाद दिया जाता है ?

लक्ष्मी—कहो, मैं अपनी माताका मुँह उजियाला कर सकूँ ।

गोव०—सो तो मैं हृदयसे कहता हूं और सदा कहूंगा। अच्छा दीदी; माताको तो पहचनवा दिया, अब माताके शत्रुओं को भी बता दो ।

लक्ष्मी—तुमने जिनका आश्रय लिया है; वे ही तुम्हें उन शत्रुओंसे परिचित करा देंगे। जाओ, उन लोगोंके साथ रहो; वे जो कहें वही करो !

गोव०—सो तो मैं महादेवकी मूर्त्ति पर हाथ रखकर कसम खा चुका हूं कि जाऊंगा। लेकिन दीदी, तुम्हारे मंत्रका जोर भी तो कम नहीं है। मैं देखता हूं, कि तुम मनुष्यको सिंह भी बना सकती हो और पालू कुत्ता भी बना सकती हो। इधर तुम्हें छोड़कर जानेको भी मेरा जी नहीं चाहता। अच्छा दीदी, अगर मैं इन लोगोंके साथ रहकर युद्ध करता फिरता रहा तो फिर तुम्हारे दर्शन कब पाऊँगा !

लक्ष्मी—अगर अपनी बहनपर स्नेह रखोगे तो कभी न कभी भेंट जरूर होगी।

गोव०—स्नेहका आकर्षण तो रहेगा ही। हमलोग नशा-खोर आदमी ठहरे ; जिधर खिंच गये, उधर खिंच गये। देखो अफीमकी गोलीने कलेजा काला कर डाला है, फिर भी ऐसा

आकर्षण है कि उसे छोड़ नहीं सकता। वैसे ही तुम्हारे मन्त्र को चोटसे तुम्हारी ओर ऐसा मन खिच गया है कि मरते दम तक तुम्हें नहीं भूल सकूंगा। देखो अगर लड़ाई करते करते विदेशमें भी मरना पड़ेगा तो "दीदी दीदी" कहते ही मरूँगा।

लक्ष्मी—भैया! "मैया मैया" कहना जिसमें मरना भी सफल हो।

गोव०—मैया मैया भी कहूंगा, दीदी दीदी भी कहूंगा।

लक्ष्मी—पागल, क्या करते हो? सन्यासिनीको माया-मोहके जालमें मत फंसाओ! भागो...भागो...

गोव०–दीदी मैंने क्या तुम्हारी कुछ हानि की है? अच्छा तो नहीं ठहरूँगा, भागा जाता हूं–अभी जाता हूं। दीदी तुम अच्छी तरह रहो, नहातेमें भी तुम्हारा बाल बांका न हो; मैं जाता हूं।

(प्रस्थान)

लक्ष्मी—(स्वगत) मेरा व्रत ग्रहण करना सार्थक हुआ। जननी जन्मभूमि तुम्हारी सेवाके लिए आज तो एक भाई भी मुझे मिल गया। मैया! फिर मैं क्यों बेकार चिन्ता कर रही हूं। मैया तारा अपार समुद्रमें फाँद पड़ी हूं। तुम्हीं राह दिखा कर आगे ले चलो मैया।

गीत।

असमयमें बाजार उठाया तूने श्यामा तारा।
क्या लेकर मैं घरको लौटूं? कोई नहीं सहारा।
जो था मेरा सभी गया वह, बिलकुल ही कंगाल हुई।

घूम घूमकर वृथा मरूँ मैं, फिर फिरकर बेहाल हुई ॥
भरी हाटमें आये थे जो, ग्राहक या बैपारी ।
एक एकबार सभी गये वे सारे ही नरनारी ॥
कर्म दोषसे बोझ पापका मैं ही सिरपर लादे,
यहाँ रह गयी बैठी, मैया, और जनमके वादे ॥
सूर्यदेव भी अस्त हो चले, मैं हूं यहाँ अकेली
इस उजड़े बाजार बीच क्या करूं ? न कोई मेली ॥
उठा गोदमें लो बेटीको जान अभागिन, मैया ।
करुणा करके अहो उबारो, बिठा चरणकी नैया ॥



दूसरा अंक.

दृश्य पहिला।

[स्थान—जहानाराका महल।]

(जाहानारा अकेली गा रही है।)

गीत।

कौन जाने, सुख कहां मिलता, यहां पर या वहां।
ढूंढ़ती फिरती, न पाती, हाय सुख तू है कहां॥
हो गई हैरान, व्याकुल हो रहा मेरा हृदय।
सुख न पाया हाय दमभर, ढूंढ़कर सारा जहां॥
हे दयासागर विधाता, दो वही निधि तुम मुझे।
जन्मसे जिसके लिए, ताकूं तुम्हारा मुंह यहां॥
इस वृथा ऐश्वर्य वैभव, और धनमें मन अहो—
है बहलता ही नहीं; कहतो यही—"सुख है कहां!"

(खोजाका प्रवेश)

खोजा—बादशाहजादी !

जहा०—क्या है-बादशाहजादी कहकर काठकी पुतलीकी तरह क्यों खड़ा रह गया? क्या कहने आया है?

खोजा—एक हिन्दू जनाना...

जहा०—सो क्या हुआ?

खोजा—वह बड़ी जोर जबर्दस्ती कर रही है।

जहा०—क्यों, तेरी नौकरी छीन लेनेके लिये ?

खोज—जी नहीं।

जहा०—फिर क्या तुझसे निकाह करनेके लिए ? वह क्या चाहती है ?

खोजा—रंगमहलके भीतर आना चाहती है।

जहा०—उसे क्या दरकार है ?

खोजा—कहती है, बादशाहजादीसे कहूंगी।

जहा०—साथमें कोई दूसरा आदमी है ?

खोजा—कोई नहीं सरकार, चेहरा बड़ाही खूबसूरत हैं।

जहा०—सच !

खोजा—बेगम साहबाके आगे झूठ बोलनेसे जो सजा मिलती है, उसे मैं अच्छी तरह जानता हूँ।

जहा०—उसे रंगमहल किसने बता दिया ?

खोजा—बादशाहके किसी सिपाहीने।

जहा०—ले आओ।

(खोजाका प्रस्थान)

जहा०—(स्वगत) दोष क्या है ! अगर कोई लावारिस हो, अगर कोई दुखिया हो, अगर शाहजादीसे उसकी कोई प्रार्थना हो ; अगर आही जायगी, उसमें हानि क्या है। देखूं शायद उसका कोई उपकार कर सकूं।

(लक्ष्मीबाईका प्रवेश)

जहा०—खोजाने ठीक कहा था; बेशक खुबसूरत औरत है।

ऐसा रूप रंगमहलमें नहीं है दिल्ली—आगरेमें नहीं है; बाद-शाहके राजभरमें होनेमें भी शक है। (प्रकट) तुम क्या चाहती हो?

लक्ष्मी—बादशाहज़ादी की कृपा-बादशाहज़ादीका आश्रय।

जहा०—तुम क्या निराश्रय हो।

लक्ष्मी—मैं निराश्रय हूं—अनाथ हूं—अभागिन हूं।

जहा०—यह मैं कैसे समझूं कि तुम मेरी शत्रु नहीं हो।

लक्ष्मी०—समझिये मेरा मुंह देखकर समझिये, मेरी आँखें देखकर, मेरा मन देखकर मेरे काम देखकर। बाँदीकी और कोई सिफारिश नहीं है।

जहा०—एक लहमें भरमें क्या आदमीका चरित्र पूरी तौरसे पहचाना जा सकता है?

लक्ष्मी—मेहरबानीके साथ आश्रय दीजियेगा तो दिन-दिन घड़ी-घड़ी भरमें मेरे हृदयका परिचय पाइयेगा।

जहा०—तबतक तुम्हें बेखटके महलमें जगह कैसे दे सकती हूं?

लक्ष्मी—बादशाहकी लड़की, जो घड़ी भरमें हजारों गुलाम और बाँदियाँ रखती है—छुड़ाती है, वह मनुष्यका मन नहीं पह-चान सकती। मनुष्य हृदयको तो वह अन्तर्यामीकी तरह जानती और देख पाती है। अगर यह न होता तो भगवान आप हीको बादशाहकी लड़की क्यों बनाते। उन्होंने मुझे या और किसीको बादशाहकी लड़की क्यों नहीं बनाया?

जहा०—समझ लिया, तुम सच बोल रही हो—तुम्हारा भोलाभाला चेहरा ही इस वातकी गवाही दे रहा है कि तुम्हारा चरित्र अच्छा है; तुम छल-कपट नहीं जानती हो। तुम्हारा देश कहाँ है ?

लक्ष्मी—मैं कर्नाटक देशकी रहनेवाली हूं।

जहा०—कर्नाटक ! इतनी दूर तुम किस तरह आई हो ?

लक्ष्मी—कभी डोली पर, कभी घोड़े पर और कभी पैदल चल कर आई हूं।

जहा०—तुम्हारे मा बाप हैं ?

लक्ष्मी—वेगम साहवा, वांदी इस वारेमें निश्चिन्त है। मेरे कोई भी नहीं हैं।

जहा०—तुम्हारे मालिक ?

लक्ष्मी—मेरे स्वामी हैं।

जहा०—उन्होंने तुम्हें रंगमहलमें कैसे आने दिया ?

लक्ष्मी—मैंने उनकी आज्ञा नहीं पाई—अपनी इच्छासे आई हूं।

जहा०—तुम्हारे मालिक कहाँ हैं ?

लक्ष्मी—वादशाहके दरवारमें हैं।

जहा०—दिल्लीके दरवारमें ! उनका नाम क्या है ?

लक्ष्मी—(विनीत भावसे सङ्कोचके साथ सिर झुकाकर) रङ्गनाथ।

जहा०—रंगनाथ—रंगनाथ ! यह तो जाना हुआ नाम है; वादशाहके मुँहसे यह नाम सुन चुकी हूं। तुम्हारा मतलव क्या है ?



लक्ष्मी—वादशाहज़ादी; मैं मामूली हूं, मगर मेरा मतलब साधारण नहीं है। मैं छोटी सी भील या कुंड होकर समुद्रको सोखना चाहती हूं, मैं ख़रगोश होकर सिंहको क़ाबूमें करना चाहती।

जहा०—तुम्हारी बात समझमें नहीं आई।

लक्ष्मी—कह तो चुकी, रङ्गनाथ मेरे स्वामी हैं।

जहा०—अच्छा, फिर ?

लक्ष्मी—स्वामी अपनी दासी पर नाराज़ हैं।

जहा०—तुम ऐसी परी औरतको नहीं चाहते ?

लक्ष्मी—वह दासीको भूल गये हैं, लेकिन दासी उन्हें नहीं भूल सकी। उन्होंने दासीको मूर्त्ति अपने हृदयसे हटा दी है; मगर मैं हृदय सिंहासनमें उनकी प्रतिमा रखकर दिन-रात उसकी पूजा करती हूं। वादशाहज़ादी क्या ऐसा कोई उपाय नहीं है, जिससे दासी अपने इष्टदेवको पा सके।

जहा०—रंगनाथका काम वादशाहके दरवारमें है; मेरी रंगमहलकी वादशाहीमें उनका कोई काम नहीं है।

लक्ष्मी—आप वादशाहकी सगी वहिन हैं!

जहा०—इससे क्या हो सकता है!

लक्ष्मी—सुना है, आपका प्रताप वादशाहके वरावर है; सलतनतके कामोंमें वादशाहके वरावर ही आपका अधिकार है।

जहा०—मैं महलके भीतर रहने वाली हूं। मेरा हुक्म रंगमहलमें चलता है, दरवारमें कैसे चलेगा!

लक्ष्मी—चारों ओर प्रसिद्ध है, कि दिल्लीके बादशाह आपके इशारेपर चलते हैं।

जहा०—तुममें ऐसा कोई गुण है कि तुम रंगमहलका कोई काम कर सको ?

लक्ष्मी—आश्रय देते ही मालूम हो जायगा।

जहा०—तुम्हारा नाम क्या है ?

लक्ष्मी—सरजू बाई।

जहा०—तुम गाना जानती हो ?

लक्ष्मी—यही मामूली।

जहा०—अच्छा, कुछ गाओ। तुम्हारा गाना अगर मुझे खुश कर सका तो तुम्हें रंगमहलमें और कोई काम नहीं करना पड़ेगा। गाओ।

(लक्ष्मी गाती है।)

गीत

क्यों विधाता हुआ मुझ पै इतना निठुर,
क्यों जरा भी दया तू दिखाता नहीं।
मेरी आंखोंके आंसू न सूखें कभी,
और जीवनका कुछ भी सुहाता नहीं॥
मैं अभागिन सदा रात दिन दीन हो,
नाम लेती तुम्हारा, पुकारूं तुम्हें।
मैं जलूं, हानि क्या; उनको रक्षा करो,
प्रार्थना और कुछ भी विधाता नहीं॥

जहा०—वाह, बहुत तोफ़ा है। सरजू, तुम्हारा रूप ही

सुन्दर नहीं है—तुम्हारा गुण भी सुन्दर हैं। तुम रूप और गुणमें असाधारण हो! मैंने तुम्हें सेमरका फूल समझा था, लेकिन नहीं, तुम बसरा-गुलाबका फूल हो। मैं निहायत खुश हुई हूं।—कोई है?

(एक खोजाका प्रवेश)

जहा०—इन्हें रङ्गमहलके दरवाजेके पास ले जा। समझा देना, कि यह मेरे महलमें रहेगी। हिन्दू बेगमके महलमें इनका खाना-पीना होगा। इन्हें कोई तकलीफ न होने पावे। कहना, यह बादशाहजादीका हुक्म है।

खोजा—जो हुक्म।

(सरजूको साथ लेकर प्रस्थान)

दृश्य दूसरा।

स्थान—कासिमखांके घरके पासका बाग।

(कासिम और रङ्गनाथ)

रंगनाथ—अब और उदासीन रहनेसे काम नहीं चलेगा सेनापतिजी! रायगढ़की लड़ाईमें बादशाहकी बेशुमार फौज मारी गई है!

क़ासिम—दिल दुरुस्त नहीं है दोस्त—किस लिए लड़ूं? कामिनीके बिना दौलत बटोरनेसे क्या फ़ायदा? पहले कामिनी हो, फिर दौलत। क्यों ठीक है न?

रङ्गनाथ—यह कैसी बात कह रहे हो सरदार बहादुर ? इस समय ये सब कामिनी और कामकी गन्दी बातें छोड़ दो। युद्धके लिये उन्मत्त मरहठे जवानोंकी कराल तलवारको किसानों की हंसियाँ समझकर उपेक्षा न कीजियेगा ?

क़ासिम—राजासाहब, आप काफिरोंके कुसंस्कारको अभी तक नहीं छोड सके। निश्चय जानिए, मैं जब चाहूंगा, तब हंसिया हाथमें लेकर दुनियाँ भरके मरहठोंको ठुल पड़े धानके पेड़ोंकी तरह एकदम काट डालूंगा !

रङ्गनाथ—तो फिर सब चेष्टा वृथा है। देखता हूं, आपसे मेरे लिए अब कोई आशा नहीं है। बादशाहने मुझे बहुत कुछ आशा दी थी। वह शायद इस दशामें मुझे नहीं छोड़ेंगे। एक दफा उनके पास जाकर सब हाल कहूँगा।

कासिम—हाः हाः हाः ! दोस्त, यह तुम्हारी भूल है-बिल्कुल भूल है। हमलोग ही बादशाहकी आँखें हैं, हमलोग ही बादशाहके कान हैं, हमलोग ही बादशाही ज़बान हैं। जान पड़ता है, आप अभीतक नहीं जानते कि, बादशाहका यकीन है कि आप ही के दोषसे अबकी हमारी हार हुई है।

रङ्गनाथ—यह आप क्या कह रहे हैं सरदार साहब ? मेरा अपराध क्या है ? मैंने तीन दिन, तीन रात लगातार जान लड़ाकर युद्ध किया है।

क़ासिम—सब जानता हूं, लेकिन आपकी बहादुरीका बखान करके मैं बादशाहकी फौजका नाम कैसे बदनाम कर सकता हूं ?

रङ्गनाथ—आप यह क्या कह रहे हैं? तो क्या बादशाह मेरी बातपर विश्वास न करेंगे ?

क़ासिम—विश्वास करना उन्हें उचित नहीं है। मैं बादशाहकी जातिका हूं, तुम दूसरी जातिके हो, मैं बादशाहके धर्मको माननेवाला हम मजहब हूं, तुम विधर्मी हो ; मैं राज-कर्मचारी हूं, तुम राजद्वारमें भीख माँगनेवालेकी हैसियतसे पड़े हुए हो। हमारे ऊपर विश्वास और तुम्हारे ऊपर संदेहका होना ही ठीक है। हमारा डाँटना और तुम्हारा डरना ही वाजिब है।

रङ्गनाथ—तो क्या मैं दोनों ओरसे गया ?

क़ासिम—क़ासिम खाँको खुश और माफिक रखनेसे आपका सब काम बन सकता है।

रंगनाथ—अब और क्या करनेसे आप खुश और माफ़िक होंगे ?

क़ासिम—इस व्याकुल प्रेमीके प्रेमकी कली खिला देने ही से—

रंगनाथ—(विस्मयके भावसे) आप किससे क्या कह रहे हैं ? मैं आपके प्रेमकी कली क्या खिलाऊँगा ?

क़ासिम—आप क्या अपने शरीरसे कली खिलावेंगे ? मुझे क्या और कोई नहीं जुटेगा जो अन्तको आपही के साथ प्रेम करूंगा ! आपसे तो मैं कई बार इशारेसे कह चुका हूं कि किस लिये आपका दोस्त बेचैन हो रहा है।

रंगनाथ—क्या वासन्तीके बारेमें आप कहते हैं ?

क़ासिम—हाँ, इस वक्त उसका नाम वासन्ती है—लेकिन

वह जब मेरी बेगम होगी तब बीबीका खूब अमीरी ढंगका नाम रखूंगा।

रंगनाथ—आप कहते क्या हैं?

क़ासिम—आप ताज्जुब कर सकते हैं। मैं बादशाहका सिपहसालार सरदार बहादुर होकर आप जैसे राजपाटसे रहित काफ़िर राजाकी मोल ली हुई बान्दीके ऊपर इतनी मेहरबानी करना चाहता हूं! यह बात जो सुनेगा उसीको अचरज होगा।

रंगनाथ—मोल ली हुई बान्दी! बासन्तीको मैं अपनी ख़ास लड़कीके बराबर मानता हूं। क़ासिम ख़ाँ साहब, आप उसे नहीं जानते, इसीसे ऐसी बात कह रहे हैं। वह मेरी बेटी हारसिंगारका फूल है, ओस पड़ने ही से झड़कर गिर जायगी। वह लाजवंती लता है, छाँह पड़ने या छूने ही से सकुच जायगी, वह अनाथ दीन लड़की दीनानाथका नाम लेकर दिन रात बिताती है।

क़ासिम—वह बसरेका गुलाब है—आपने असभ्यताके अन्धकारमें रखकर उसे बदरंग कर डाला है। अब मैं उसे अपनी सभ्यताके सूरजकी रोशनीमें लाकर खिला दूंगा, उस गुलाबकी ख़ुशबू बादशाहके रंगमहल तक फैलेगी, उसकी रंगकी चमकसे शाहज़ादी तककी आँखें चौंधिया उठेंगी!

रंगनाथ—सरदार साहब इसके लिये मुझे क्षमा कर दीजिये। मर्मस्थलमें चोट पहुंचानेवाली यह बात छोड़ दीजिये।

मैं अपने हाथसे वासन्तीके कोमल हृदयको चूर चूर नहीं कर सकूंगा। मैं लालसाका दास जरूर हूं, लेकिन उस बिना सूंघे हुए वन-फूलको देव पूजनके लिए भी डालसे तोड़कर अलग नहीं कर सकूंगा। खाँ साहब, वह बालिका कुछ भी नहीं जानती। मनुष्यका भाव, जवान औरतकी प्रवृत्ति, उसके हृदयमें नहीं है। उसके आशा नहीं है, इच्छा नहीं है, सुख नहीं है, दुःख नहीं है, धर्म नहीं है, अधर्म नहीं है, विलास नहीं है, वेदना नहीं है, वह खुद अपने आपेमें नहीं है। उसने अपना सब कुछ अपने दीना-नाथको अर्पण कर दिया है।

क़ासिम—क्या बात है, वाह सब खैरातकर डाला है! सब कुछ दीनानाथको दे दिया है। अब उसकी परीसे बढ़कर प्यारी सूरत बाक़ी है; उसे ही रखकर क्या होगा! वह भी इस प्राणनाथको दे डाले।

रंगनाथ—(क्रोधसे) गंवार—उजड्ड!

क़ासिम—क्या कहता है गुलाम ताबेदार।

रंगनाथ—(सकपकाकर) कुछ नहीं—मैंने आपको कुछ नहीं कहा। मेरा मन चिन्ताके मारे चिल्ला उठा है।

नेपथ्यमें-या पीर मौला मुश्किल आसान।

नेपथ्यमें—चुप रह बदमाश।

नेपथ्यमें—ज़बान बन्द करो।

नेपथ्यमें—सुनरे सुनरे दिल दीवाना, झूठी जिन्दगी झूठ बहाना! या पीर—



रंगनाथ—यह काहेका गोलमाल है।

(मुश्किल आसानके वेशमें गोवर्द्धनका प्रवेश। दो पहरेदार उसे पकड़कर लाते हैं।)

१ पहरेदार—हुजूर; एक बदमाश जासूस पकड़ा है।

गोव०—या पीर मौला मुश्किल आसान। जो मुश्किल है उसे आसान कर देते हैं।

क़ासिम—तू कौन है

गोव०—शाह जुम्मापीर ; मनकी मुराद पूरी करते हैं।

क़ासिम—चुप चुप यहाँ तू क्या कर रहा था ?

गोव०—और क्या करूंगा बाबा, दरगाहका फकीर हूं। दरवाजे दरवाजे भीख माँगता फिरता हूं।

क़ासिम—तो फिर मेरे बागके भीतर क्यों आया था ?

गोव०—राजे रजवाड़े नवाब बादशाह वगैरहके घर न जाकर भीख माँगने क्या किसी कंगालके घर जाता बाबा !

रंग०—तू ज़रूर गुप्तचर है।

गोव०—(कासिमसे) यह क्या बाबा, दीन दुनियाके मालिक बादशाह आलमगीरके अमलमें एक काफ़िर गुलाम मुसलमान फ़कीरको गाली देता है ! दोहाई है बादशाहजादा साहब, इसका विचार कीजिये।

क़ासिम—मैं बादशाहजादा नहीं हूं।

गोव०—भूल हुई मेरे बाप—तुम बादशाहजादेके बाबा हो, वही कौन जादा जिसे कहते हैं—पेटमें है मुंह तक

नहीं आता। दिल्लीके फार्सी शब्द अभीतक वरज़वान नहीं हुए बाबा।

क़ासिम—तेरा घर कहाँ है ?

गोव०-बंगालमें। चटगांव बादशाह बाबा।

क़ासिम—इतनी दूरसे यहाँ क्यों आया है ?

गोव०—मैं कई पीढ़ीका फकीर नहीं हूं। मनके दुःखके मारे मुश्किल आसान करते करते देशसे निकल पड़ा हूं।

क़ासिम—क्या देशमें तुझे खानेको नहीं मिलता था ?

गोव०—ना बदशाह बाबा। पेटके मारे कितने आदमी फकीर होते हैं बाबा ? यह जो चिराग हाथमें लेकर द्वार-द्वार घूम रहा है सो बाबा खाली प्रेमकी करतूत है—एक ख़ूबसूरत औरतकी मुहब्बतका फल है बादशाह बाबा !

क़ासिम—(कुछ सहानुभूतिके भावसे) तुम ग़रीबके लड़के हो; यह नशा कैसे हो गया ?

गोव०—बादशाह बाबा, वह औरत कोई ऐरीगैरी नहीं थी। वह मेरी व्याहता बीबी थी ; मेरे कलेजेमें कटार मारकर भाग गई बाबा। शर्मकी बात और क्या कहूं, मेरी बीबी गुलनार बहुत ही खूबसूरत थी। रंग एक दम लहसुनका ऐसा सफेद था; बालोंका गुच्छा जैसे मानिकपीरकी चंवरी था। उसके बदनसे आप ही आप प्याजकी खुशबू निकलती थी। मगर बाबा कौएके घोसलेमें हीरामन तोता कैसे रह सकता है, पंख निकलते ही उड़ गई। मैं भी तभीसे मुश्किल-आसान फकीर

होकर घरसे निकल पड़ा हूं। एक जगह सुना मेरी बीबी दक्खिनके देशमें आकर बाई बन गई है। इसीसे इस देशमें आकर दस आदमियोंकी मुश्किल आसान करता हूं और साथ ही साथ अपनी मुश्किलकी जड़ खोज रहा हूं।

क़ासिम—तुम्हें यहाँ कोई पहचानता है?

गोव०—जोरूको भगा देनेवाले फकीरको कौन पहचानेगा बाबा, मगर हाँ यह चाचा (रंगनाथको दिखाकर) पहचानें तो पहचान भी सकते हैं।

रंगनाथ—मैं तुझे कैसे पहचान सकता हूं, मैं क्या जानूं।

गोव०—अरे चाचा, मुझे पहचानो या न पहचानो, चर देख कर तो पहचान सकते हो? तुम तो चरके राजा हो।

रंग०-यह निश्चय चर (जासूस) है। जान पड़ता है इसने, छिपकर हमारी बातचीत सुनी है।

गोव०—जान पड़ता है क्यों कहते हो चाचा, सचमुच मैंने सब बातें सुनी हैं। मुसलमान कहीं झूठ बोलते हैं? क्या कहूं बादशाह बाबा, क़सम खा चुका हूं कि बीबी गुलनारकी नाक काटे बिना गोश्त नहीं ज़बान पर रखूंगा, नहीं तो जिस दिन काफ़िर चाचाकी बेटीके साथ बादशाह बाबाका निकाह होगा उस दिन पेट भर कलिया-कबाब खाकर बाबाकी मुश्किल आसान करता। अहा वह कैसी औरत है बादशाह बाबा, क्या कहूं वह परी है!

क़ासिम—तुमने क्या उसे देखा है?

गोव०—एक दिन इन चाचाके घर मुश्किल आसान करने गया था तब उसे देखा था बाबा। बादशाहकी मर्जी मालूम होती तो उसी दिन उस परीको झोलीके भीतर रखकर यहाँ लाकर हाजिर कर देता।

क़ासिम—ये सब काम भी आते हैं।

गोव०—बादशाह हुक्म दें तो सब कुछ कर सकता हूं? अभी दया करके इस बादशाही जगहमें—पैरोंकी जूतियोंमें-ज़रा रखिये तो देख लीजियेगा, कि इस चटगांवके बंगालीमें क्या क्या करामातें हैं।

क़ासिम—मुझे तुम अच्छे आदमी जान पड़ते हो; तुमसे मुझे कुछ काम है। इस वक्त जाकर बाहर ठहरो। (दोनों पहरेदारोंसे) यह आदमी मेरे पास रहेगा; कोई इसको तकलीफ न पहुंचावे।

गोव०—(जाते समय) या पीर मौला—

(दोनों पहरेदारोंके साथ)

रंगनाथ—यह आदमी बातें बनाकर अपने मसखरेपनसे आप को खुश कर गया है। मगर मुझे जान पड़ता हैं, कि यह दुश्मन की तरफका आदमी है।

कासिम—कमसे कम आपके लिये दुश्मनका आदमी या दुश्मन नहीं। आप जिस वक्त चिल्ला उठे थे, उस वक्त अगर एका-एक यह न आ जाता, तो जान पड़ता है, मैं अनमने भावसे तलवार खींचकर आपके सिरके साथ खेल कर डालता।



रङ्गनाथ—आपके मनमें क्या अभी तक मेरे ऊपर क्रोध बना हुआ है ? आप अभी तक नाराज़ हैं ?

कासिम—मेरी नाराज़गी दूर करना आपके हाथ ही में है। इस वक्त आप घर जाइये, अच्छी तरह सोचकर देखियेगा, वासन्तीका ख़याल और ममता अगर आप न छोड़ सकें तो आपको सिर्फ़ सिंहासनकी ही आशा नहीं छोड़नी पड़ेगी, बल्कि ज़िन्दगी तकसे हाथ धोना पड़ेगा। समझे !

(प्रस्थान)

रङ्गनाथ—(स्वगत) बड़ी टेढ़ी समस्या है—क्या करूं, जीवन सर्वस्व वासन्तीको किस तरह त्याग दूँ, और राज्यकी आशा ही कैसे छोड़ी जा सकती है ? वासन्ती भी सुन्दर है, राज्य भी सुन्दर है ! मेरे रक्तमें वासन्ती है; तो नसनसमें राज्य पानेकी लालसा भरी पड़ी है। मेरे हृदयमें वासन्ती है, बाहर राज्य है, मेरी आत्मामें वासन्ती है तो हृदयमें राज्यकी अभिलाषा है। मैं किसीको नहीं छोड़ सकूँगा; मुझे दोनों ही चाहिये। लेकिन कासिम यह क्यों सुनेगा ? वह तो शत्रु है ! हो वह शत्रु; मैं उसके पैरोंकी रज सिरमें लगाऊंगा; दिन-रात अनुनय-विनय कर उससे करुणाकी भीख मांगूंगा। इतने पर भी क्या उसे दया न आवेगी ? इससे भी क्या वह न मानेगा ? मेरे उजड़े घरके उस पुण्य-पेड़को उखाड़ने आवेगा ?—ना ना, अब इस बारेमें बहुत विचार नहीं करूंगा—मेरा सिर जैसे फिरा आ रहा है, दिमाग सही नहीं है; आँखों और कानोंसे बिजली सी निकल

रही है; अस्थि-मज्जा-मेदाकी गांठें ऐसे टूटी जा रहीं हैं-जैसे उन्हें कोई पीसे डालता है; नस-नसमें विषम घात प्रतिघात चल रहा है। बड़ा कष्ट है—बड़ा कष्ट है—क्या करूं ? कहाँ जाऊं ?

(प्रस्थान)

दृश्य तीसरा।

स्थान—जहानाराका महल।

जहानारा अकेली

जहा०—(स्वगत) भारी कर्तव्यका बोझ अपने ऊपर लिया है! पराया उपकार करना होगा, अभागिनकी आँखोंके आंसू पोंछना होगा! सरजूका यह काम मुझे पूरा करना होगा। वह हिन्दू है, मगर मुझे उससे कुछ विद्वेष नहीं है। वह मेरे आश्रयमें आकर रही है, अनुग्रहकी भीख मांग रही है। वह मेरी बांदी नहीं, सहेली है। मैं उसके आंसू पोंछूंगी; उसके बदलीके दिन ऐसे मलिन मुखमण्डलको सवेरे सूरजकी किरणोंसे खिले हुये कमलके फूलकी तरह प्रफुल्लित बनाऊंगी। रङ्गनाथ आता है, कौशलसे उसका इरादा समझना होगा, कौशलसे ही सब काम पूरा करना होगा।

(रङ्गनाथका प्रवेश)

जहा०—आपहीका नाम रङ्गनाथ है ?

रङ्ग०—जी हां शाहजादी साहबा। हजूरने गुलामको किस लिये अनुग्रह करके याद फरमाया है?

जहां०—आपको देखनेके लिये। कुछ काम भी है, बादशाहके यहाँ आपका काम पूरा हो गया?

रंग०—नहीं शाहजादी। यह भी नहीं जानता कि और कब तक इसी तरह रहना पड़ेगा।

जहां०—इतने दिनसे आप यहां ठहरे हैं। देश जानेके लिये जी नहीं चाहता?

रंग०—कहाँ है मेरा देश! जिस देशमें मेरा घर नहीं है, आश्रय नहीं है, स्थान नहीं है, वह देश मेरा देश कैसा? वह इस समय राजारामका देश है। उनका गौरव गीत आज सारे महाराष्ट्र देशमें गूंज रहा है। मैं क्या आज फकीर होकर उस राजारामके दरबारमें सिर झुकानेके लिये देशको लौट जाऊंगा।

जहां०—क्यों, क्या आपके जोरू और बाल-बच्चे नहीं हैं?

रङ्ग०—जी नहीं।

जहां०—आपने शादी नहीं की?

रंग०—की थी। लेकिन ब्याहके बाद ही स्त्रीको त्याग दिया। उसके पिताने मेरे शत्रुका पक्ष लिया था।

जहां०—ससुरसे ख़फ़ा होकर जोरूको छोड़ दिया? ब्याही औरत किसकी चीज है?

रंग०—इतना नहीं सोचा। जिस शत्रुकी छाँह नहीं छूना है, उसकी लड़कीको छूनेकी भी इच्छा नहीं हुई।

जहा०—इस वक्त आपकी औरत कहाँ है ?

रंग—मालूम नहीं। खबर मिली है, कि इस समय वह कंगाल होकर राह-राह मारी-मारी फिर रही है।

जहा०—तो क्या राजा रंगनाथकी औरत विना आश्रयके अनाथकी तरह इधर-उधर मारी-मारी फिरेगी ?

रंग०-रंगनाथ राजा ही कहाँ हैं जो उसकी रानी होगी ? शाही दरबारके हर हरकारेके आगे; मुग़ल छावनीके हरएक सिपाहीके सामने जिसे अनुग्रहके लिए घुटने टेकने पड़ते हैं, वह भी राजा है, वह भी मनुष्य है ? बादशाह आलमगीरका सिंहासन हिन्दुस्थानमें अटल हो, भारतकी हवामें मुग़लोंका झण्डा सदा लहरात रहे ; लेकिन माफ कीजियेगा शाहज़ादी साहबा, मैं इस बातको कैसे भूल सकता हूं कि मैं एक मनुष्यत्वहीन पराधीन दास हूँ ! मैं अब राजा रंगनाथ नहीं हूँ ; एक लज्जा, घृणा और अपमानका आधार पात्र मात्र हूं। इस हृदयमें अब प्रेम या किसीकी याद कुछ नहीं है। राज्य चाहिये राज्य; राज्य पहले है, स्त्री पीछे है। पहले प्रधानता प्राप्त करूँगा, फिर प्रेम देखा जायगा !

(सरजूका प्रवेश)

जहा०—क्यों सरजू ?

सरजू—आपकी तबियत खराब थी ; अब आप कैसी हैं-यही देखने आई थी।

जहा०—मैं अच्छी हूं ; तुम जाओ।

(सरजका प्रस्थान)

रंग०—वाह कैसी सुन्दरता है!

जहा०—क्या हुआ, आपको तबियत क्या कुछ ख़राब हो गई है?

रंग०—समझमें नहीं आता, तबियत खराब हो गई है, या आराम हो गई है! यह वेदना है या विलास है—प्रमोद है या प्रमाद है!

जहा०—यह रोग तो बुरा नहीं है—आपको क्या अकसर यह रोग सताता है?

रंग०—जी नहीं, एकाएक कलेजेके भीतर न जाने कैसे होने लगा, शाहज़ादी! अनुग्रह करके इस अधीनको एक बात पूछनेकी आज्ञा दीजियेगा क्या?

जहा०—एक नहीं, एक सौ बातें पूछिये।

रंग०—वह कौन है?

जहा०—कौन?

रंग०—वही जो अभी आकर चली गई है!

जहा०—उसका नाम सरजू हैं; मेरी एक बान्दी है...हाँ वह मैं यह कह रही थी कि आपको इस खतरनाक जगहमें जो मैंने बुलाया है उसका एक सबब है...

रंग०—(अनमने भावसे) बेअदबी माफ़ हो...वह तो कोई हिन्दू औरत जान पड़ती है!

जहा०—सिर्फ़ यही! या भोली भी जान पड़ी!

(सरजूका फिर प्रवेश)

रंग०—कैसी सुन्दरता है!

सरजू—शाहज़ादीजी, उदयपुरी बेगमने आपको सलाम कहा है।

जहा०—राजा साहब, मैं जाती हूं। सरजू आपको विदा कर देगी। और किसी दिन आपसे बातचीत करूँगी।

(प्रस्थान)

सरजू-(स्वगत) स्वामीका हृदय एकदम तो सूख नहीं गया। इस दृष्टिका मतलब क्या है?—लालसा या प्रेम? (प्रकट) आप क्या अभी जायंगे?

रंग—जरा ठहर कर, आपसे क्या दो-एक बातें पूछ सकता हूं?

सरजू—कहिए।

रंग०—आप हिन्दू रमणी होकर मुग़ल रंगमहलमें क्यों हैं?

सरजू—आपही हिन्दू होकर मुग़लोंके दरबारमें क्यों हैं?

रंग०-मुझे अन्यायके साथ मेरे राज्यसे हटाया गया है, इसीसे, अपना न्यायसंगत अधिकार फिर पानेके लिये मैं बादशाहसे सहायताकी प्रार्थना करने आया हूं।

सरजू—मैं भी अन्यायके साथ अपने राज्यसे निकाली गई हूं इसीसे—

रंग०—क्या आप किसी राजाकी रानी हैं?

सरजू—हर एक स्त्री राजरानी है, अगर उसका पति प्यार और आदर करता है। मैं इस समय भीख माँगनेवाली कङ्गाल हूं!



रंग०—आहा, ऐसे कल्पवृक्षकुसुमको अनादरसे धूलमें फेंक देनेवाला कौन पापी है ?

सरजू—जान पड़ता है, आप वैसे नहीं हैं, कल्पवृक्षकुसुमका आदर करना जानते हैं ?

रंग०—इस पारिजात पुष्पके आगे पृथ्वी भरका साम्राज्य भी तुच्छ है।

सरजू—देखती हूं, आप तो ललित आलापसे ललनाको लुभानेमें अत्यन्त चतुर हैं। लेकिन उस समय मेरे कानमें भनक पड़ गई थी—आप शाहज़ादीसे कह रहे थे कि ससुर पर नाराज होकर आपने अपनी स्त्रीको त्याग दिया है—क्यों ?

रंग०—वह क्या इतना बड़ा निठुर काम है ?

सरजू—नहीं साहब, वह खूब दयाका काम है। जाने दीजिए, उस जिक्रकी जरूरत नहीं है। मै आपसे एक बात पूछती हू। आप स्वार्थ सिद्धिके लिये विदेशीके चरणोंका आश्रय लिये हैं, अपनी जातिके लाशके ऊपर सिंहासन बिछाकर मसानके राजा होनेकी कामना करके उसके लिये लालायित हैं। अच्छा, अबतक आपको उसमें कहाँतक सफलता प्राप्त हुई है ? क्या एकबार भी आपके ऊपर विजय-लक्ष्मीका कृपा कटाक्ष हुआ है ?

रंग०—ना—नहीं हुआ, लेकिन उसका कारण एक नीच-हृदय विलासलंपट मुसलमान सेनापतिका आलस्य और उपेक्षा है। क़ासिम खाँ अगर एक बार मन लगाकर लड़ता...

सरजू—क़ासिम लड़ेगा ? हिन्दू राजाको सिंहासन पर विठा-नेके लिए मुसलमान लड़ेगा ? क्यों क्या आपके क्षत्रियबाहुमें लकवा मार गया है ?

रंग०—मैं अकेला...

सरजू—न-सिर्फ अकेला ही नहीं आप हैं ही नहीं, आपका जीवन नहीं है, आप मुर्दा हैं। पुरुषकी शक्ति स्त्री है, शक्ति-हीन पुरुष मुर्दा है। मुर्दा मर्द किसके लिए संसार, परिवार जोड़ेगा, राज्य और ऐश्वर्य किसके लिए, किसकी लाज, धर्म, इज़्ज़त बचानेके लिए आप प्राणोंको तुच्छ समझकर आगके मुंहमें दौड़ जायेंगे, किसके मुंहको याद करके आपके हृदयमें बल आवेगा, किसकी तेजसे भरी चमकीली स्नेह दृष्टि की सुधा-वृष्टिसे आपके शरीरमें लगे शस्त्रोंके घावोंकी जलन दूर हो जायगी ? अशोकवाटिकामें कैद जानकीके आँसुओंसे तर मुखमण्डलकी याद न आती तो क्या रामचन्द्र लक्ष्मणकी छातीमें लगी हुई शक्तिकी चोट सह सकते थे, या रावणको उसके वंश सहित मार सकते थे ? अर्जुनका गाण्डीव धनुष नहीं, भीमसेन की गदा नहीं, श्रीकृष्णका पृष्ठपोषक होना नहीं—कुरुक्षेत्रमें पाण्डवोंके प्रचण्ड पराक्रमका प्रधान कारण कुपित कृष्णाकी कुटिल दृष्टि ही थी, उनकी एंड़ी तक बिखरी हुई वेड़ी ही थी, कर्णाटकराज आपने शत्रुके रुधिरसे हाथ रंगनेका इरादा किया है ! मगर आप उस रक्तको किस द्रौपदीके केशोंमें पोंछेंगे ?

रंग०—मैं समझता हूं, आपकी ऐसी पत्नी पाकर अत्यन्त

हीन पुरुष भी जगतको जीत सकता है। आप बातों—बातोंमें अपने ऊंचे घरानेका आभास दे चुकी हैं। अब आप क्या बता सकती हैं कि कितने समय तक साधना या तपस्या करनेसे आपकी ऐसी पत्नी प्राप्त हो सकती है?

सरजू—गुणहीन ढीठ और चञ्चल दासीको लजाइये नहीं। मेरी बात छोड़ दीजिये, हाँ आप साधनाकी बात जो पूछ रहे थे उसके बारेमें मैंने सुना है कि सब साधनाओंका श्रेष्ठ मार्ग प्रेम है। प्रेमसे ईश्वर भी मिल जाते हैं।

रंग०—प्रेम सुन्दरी प्रेम! दम भर बातचीत करनेके बाद ही तनिक इस तिलोत्तमातुल्य तुलना हीन रूपकी झलक आँखोंके आगे पड़ते ही जैसा प्रेम हो गया है उसे मैं किस तरह समझाऊं।

सरजू—ठहरिये, ठहरिये! मैं अपने ऊपर प्रेमका परिचय नहीं चाहती। अपनी जातिके ऊपर आपको प्रेम कहाँ है? जिस धर्मप्राण मरहठा वंशमें आपने जन्म लिया है, उसके ऊपर आपको अनुराग कहाँ है? जो अपनी जातिसे घृणा करता है अपने धर्मसे घृणा करता है, वह क्या स्त्रीको प्यार कर सकता है? राजन्, प्रेमकी साधना कीजिये, विद्वेष छोड़ दीजिये, अपनी जातिके प्रेमसे अपना हृदय भर दीजिये। तब देखियेगा कि उस पवित्र प्रेमके आकर्षणसे आपकी मानसी प्रतिमा आपसे मिल जायगी।

रंग०—सरजू! तुम्हारी बातोंसे मेरे हृदयमें हलचल मच

गई है। वासन्ती भी ऐसी ही बातें कहती है। मैं सोचूंगा

सरजू—अब जाइए, यहाँ और ठहरना उचित नहीं है।

रंग०—चलो। (जाते जाते) तुम मेरी सरस्वती हो, तुम मेरी लक्ष्मी हो, तुम मेरी शक्ति हो, हृदयमें रहोगी मेरी रक्षा होगी। हृदयसे हट जाओगी, वैसे ही राह भूल जाऊंगा।

(दोनोंका प्रस्थान)

दृश्य चौथा।

स्थान—रंगनाथका घर।

(वासन्ती गाती है।)

गीत

सभी मिलकर सदा तुमको करें हैरान हे ईश्वर।
कभी क्या उनकी वह बेहद मिटेगी कामना दुर्भर॥
न चाहे तुमको कोई, ये इसे चाहें—उसे चाहें।
सदा तुमको सताते हैं, न कुछ पाते हैं जीवन भर॥
इसीसे इस हृदयमें यत्नसे आसन बिछाया है—
तुम्हारे ही लिये स्वामी करो आराम तुम इसपर
हृदय मेरा तुम्हारे आगमनसे हो गया शीतल
नहीं कुछ और चाहूं मैं, न दूंगी कष्ट करुणाकर॥

(सरजूका प्रवेश)

वासन्ती—(चौंककर) कौन कौन, तुम हो जी! (सरजूको देखकर)

कैसा रूप है! बहुत ही सुन्दरी हो! तुम राधिका हो, व्रजकी रानी राधिका हो! क्यों?

सरजू—मैं कौन हूं, सो फिर मालूम हो जायगा। पहले यह बताओ, यही राजा रंगनाथका घर है? वह कहां है?

वासन्ती—वह तो इस समय घरमें हैं नहीं। मगर तुम बहुत ही सुन्दरी हो—सुन्दरी हो!

सरजू—राजा साहब अभीतक घर नहीं पहुंचे। आः—बच गई! अच्छा हुआ।

वासन्ती—तुम क्या उन्हें पहचानती हो? तुम क्या उनकी कोई हो?

सरजू—तुमसे मुझे बहुत बातें कहनी हैं। तुम तो वही लड़की हो न, जिसे राजाने पाला है?

वासन्ती—हाँ मैं वासन्ती हूँ। पिताजी मुझे राहसे उठा लाये थे। ना-ना पिताजी नहीं उठा लाये, मेरे दीनानाथने मुझे उठाकर पिताजीके हाथमें दे दिया था। मेरे कोई नहीं था। ऐसे प्यार करनेवाले पिताको पाया, मगर एक माता नहीं मिली। इसके लिये मैं पिताजीसे बहुत कुछ कहती हूं। आहा, तुम कैसी सुन्दरी हो। तुम अगर मेरी कोई होतीं—माता या बहन—तो क्या कहना था!

सरजू—मैं तुमसे बढ़कर सुन्दरी नहीं हूं, तुम्हें कलेजेके भीतर रखनेको जी चाहता है। मगर अभी नहीं। राजासाहबके साथ भेंट हुई थी, वह आते ही होंगे। मैं और राहसे आई हूं, इसीसे पहले पंहुच गाई।

वासन्ती—पिताने तुम्हें देखा है, वह तुम्हें पहचानते हैं ?

सरजू—तुम अगर थोड़ी देरके लिये अपने घरमें मुझे छिपा-कर रख सको तो मैं तुमसे सब हाल कहूंगी।

वासन्ती—तुम यहाँ रहोगी? रहो न...रहो न! मैं तुम्हें बहुत प्यार करूँगी।

सरजू—रहूंगी; मैं भी तुम्हें ख़ूब प्यार करूँगी। मगर अभी नहीं! इस समय तुम चलो, मुझे अपने घरमें छिपा रक्खो। देखो, राजा साहब मेरे रहनेका हाल न जान पावें, अभी उनसे कुछ मत कहना।

वासन्ती—क्यों अभी तो तुम कह चुकी हो कि वह तुमको पहचानते हैं।

सरजू—बहुत बात चीत करनेके लिये समय नहीं है...जल्दी तुम अपने रहनेके कमरेमें मुझे छोड़ आओ। इस समय गोल-माल मत करो। पीछे तुम्हें मालूम हो जायगा कि राजाके भलेके लिये, तुम्हारे भलेके लिये, मैं यहाँ आई हूं। चुप क्यों रह गईं? तुम मुझ पर विश्वास नहीं करतीं?

वासन्ती—ना ना, यह नहीं है, मैं तुम्हें देखते ही प्यार करने लगी हूं...तुम पर विश्वास नहीं करूँगी! तुम मेरे दीना-नाथपर तो विश्वास करती हो न! उन्हें प्यार करती हो न?

सरजू—मैं दीनानाथकी दासी हूं, वे मेरे सर्वस्व हैं।

वासन्ती—तब तो मैंने ठीक सोचा था। तुम व्रजकी रानी राधिका हो। आओ...

(दोनोंका प्रस्थान)

(रङ्गनायका प्रवेश।

रङ्ग०—रात बहुत हो गई है, जान पड़ता है, वासन्ती सो गई। मेरी वासन्ती मोताके स्नेहकी भूखी है। अगर मैं उसे सरजूकी गोदमें दे सकूं तो सपनेमें वालिका को किसी वातकी कामी न रहे। वाह, मैंने तो सपनेमें नन्दनवन तैय्यार कर डाला! वासन्तीको पानेकी इच्छा अगर कासिमके मनमें क्षणिक मोह पैदा कर दे तो विपम विपत्ति है। वह नीच प्रकृतिका आदमी है, वासन्तीको विना पाये मेरे राज्यके उद्धार में सहायता नहीं करेगा। एक वात और है, वह लम्पटकी दृष्टिसे न देखकर वासन्तीको पत्नीके रूपमें ग्रहण करना चाहता है। बुराईमें भलाई इतनी ही है। मगर वासन्ती मेरे वनकी हरिणी है, विजातीय व्याघ्रके घर जाने पर डरके मारे ही सूख जायगी। (नेपथ्यके अभिमुख होकर) वासन्ती, क्या सो गई वासन्ती?

(नेपथ्यमें) कौन, पिताजी? आती हूँ।

रंग०—ना ना, लेटी रहो, उठो नहीं। ऐसी कुछ विशेष जरूरत नहीं है।

(वासन्तीका प्रवेश)

वासन्ती—नहीं पिताजी, सोऊंगी क्यों? तुम इतनी देरमें आये हो, मैं सोऊंगी कैसे, अवतक मैं वाहर वैठी थी।

रंग०—बाहर क्यों बैठी थी ?

वासन्ती—तुम्हारे लिये ; और इस खयालसे भी कि शायद कोई आये जाये।

रंग०—देखो बेटी, अब तुम पहलेकी तरह बहुत बाहर न रहा करो। धीरे-धीरे तुम सयानी हो रही हो। भीख मांगनेवाले कङ्गाल-फकीर आवें तो दासीके हाथ भीख भेज दिया करो।

वासन्ती—क्यों, क्या हुआ ?

रंगनाथ—यह शहर बड़ा खराब है। यहाँ हजारों तरहके आदमी आते हैं। कौन किस इरादेसे आता है, नहीं कहा जा सकता। सुना है, इसी बीचमें कभी कोई फकीर आया था और तुमसे भीख ले गया था। उस सालेने बड़ी बड़ी जगहोंमें जाकर—

वासन्ती—क्या मुझे गाली दी है ?

रंग०—ना ना गाली नहीं दी, बल्कि खूब तारीफ की है। लेकिन इस बादशाही शहरमें स्त्रीके रूपकी तारीफ़ उसके लिये विपत्तिका कारण बन सकती है।

वासन्ती—(हंसकर) क्यों, तुम्हारे इस बादशाही मुल्कमें सुन्दरी स्त्रियोंको फांसी होती है क्या ?

रंग०—सुन्दरी स्त्रियोंको नहीं, बल्कि अकसर उनके सौन्दर्यको बेशक फांसी होती है।

वासन्ती—छीः छीः तुम्हारा बादशाह ऐसा नीच है !

रंग०—मैं बादशाहके खयालसे यह बात नहीं कहता, लेकिन हां उनके कर्मचारियोंमेंसे अनेक...

वासन्ती—समझ गई—समझ गई, बहुधा नौकरका चलन देखकर ही मालिककी तबियत पहचान ली जाती है।

रंग०—अच्छा, इन बातोंको रहने दो, जाकर सोओ। जानती हो, मैं तुम्हें किस लिये सावधान कर रहा था—तुम्हारी कन्या अवस्था बीत गई है। शीघ्र ही तुम्हारा व्याह करना होगा, तुम्हारा जैसा अनूप रूप है, तुम्हारा जैसा सुन्दर स्वभाव है, उससे मुझे आशा है, कि तुम साधारण घरकी गृहणी नहीं बनोगी, मामूली घरमें तुम्हारा व्याह नहीं होगा।

वासन्ती—यह तुम क्या कहते हो पिताजी, तुम क्या मुझे अपनेसे अलग या दूर किया चाहते हो?

रंग०—छीः छीः! ऐसी बात नहीं कहो। लेकिन बेटी, जानती हो, लड़कीके ऊपर पिताका अधिकार थोड़े ही समय तक रहता है। पराये घरमें जानेके लिये ही लड़कीका जन्म होता है। बालिका अवस्थामें वह पिताकी और जवानीकी अवस्थामें पतिकी सम्पत्ति होती है।

वासन्ती—तो पिताजी ऐसे वरके साथ मेरा व्याह न कर दो, जिसमें तुम्हें छोड़कर न जाना पड़े।

रंग०—दामादको घरमें रखकर पालूंगा! छीः...छीः!

वासन्ती—तुम घरमें रखकर क्या पालोगे; बल्कि यह कहो

कि पृथ्वीके सब लोग उसी तुम्हारे दामादके घरमें रहते हैं और उसीका दिया हुआ अन्न खाते हैं।

रंग०--बेटी; फिर तूने वही पागलपन शुरू कर दिया!

वासन्ती--पिताजी, पृथ्वीपर मिथ्याकी मर्यादा क्या इतनी अधिक है कि कोई सच बातकी चर्चा चलावे तो लोग उसको पागल कहने लगते हैं?

रंग--भगवानसे व्याह करोगी--यह पागलपनकी बात नहीं तो और क्या है?

वासन्ती--क्यों, भगवान पिता हो सकते है माता हो सकते हैं, और पति नहीं हो सकते? अभी तो तुमने कहा था, कि बालिका अवस्थामें पिताका और जवानीकी अवस्थामें पतिका अधिकार होता है। पति अगर युवतीका ऐसाही अपना आदमी है तो वह भगवानके रहते और किसीको अपना आदमी क्यों बनावे?

रंग०--अच्छा, तुम जाकर सोओ। इस समय मुझे बहुत काम है। कासिम खाँ युद्धमें जानेमें इधर-उधर कर रहा है अगर इस समय राजारामपर आक्रमण नहीं किया जा सका तो फिर मेरी सारी आशापर पानी फिर जायगा।

वासन्ती--पिताजी, अब और क्यों--

रंग--इस समय तुम जाओ बेटी।

(वासन्तीका प्रस्थान)

रंग०(स्वगत) कासिमखांका अपराध क्या है! यह रत्नहार

बादशाहके मनको भी लुभा सकता है। पहले मैं जरूर सोचता था कि इस तुच्छ सोनेके लिये लोग इतने लालायित क्यों होते हैं? लेकिन आज सरजूने मेरे हृदयमें, मेरे खयालोंमें--घोर हलचल मचा दी है। मरुभूमिमें नदी पैदा करनेके लिये--महानिशामें दीपक जलानेके लिये-मेरी राक्षसी आशामें जान डालनेके लिये-कहाँसे ललित-ललामललाम ललना इस सरजू आकर देख पड़ी! सरजू नदीकी लहरोंके समान कृष्ण-केश-कलापमें सरजूके साँवले अंगोंकी शोभा लहराती है। सरजूके नयनोंमें व्रजकी यह वही प्रेम नदीकी चञ्चलता झलकती है। सरजूके कण्ठमें कोयलकी कोकली और कालिन्दीका आनन्द-कल्लोल प्रकट है। बलिहारी उस रूपकी! बलिहारी उस आवाजकी! उसके झिड़कनेमें भी कैसी सहानुभूतिकी सान्त्वना थी! तिरस्कारमें भी कैसा प्रीतिका पुरस्कार था! अनुयोग (शिकायत) में भी कैसा अनुनयका भाव भरा था! इस समय पहलेसे भी अधिक सिंहासनका प्रयोजन हो गया है। कटीले पेड़को काटना ही इस समय जीवनका एक मात्र उद्देश्य नहीं है, साथ ही साथ मैंने कुसुम वृक्ष लगानेके सुकुमार संकल्पको भी हृदयमें स्थान दिया है। जो सिंहासन सरजूके रूपसे प्रकाशित होगा उसका मूल्य मेरी दृष्टिमें अपरमित है।

(एक सिपाहीका प्रवेश)

सिपाही—आदाब अर्ज़, राजा साहब।

रंग०—आदाब, क्या खबर है



सिपाही—बहुत ही खुशीकी ख़बर है। छत्रपति राजाराम रायगढ़के किलेमें घिरे हुए हैं। आपका राज्य इस समय एक तरह अरक्षित है। इस सुयोगमें अगर आप बादशाही फरमान लेकर अपने राज्यमें प्रवेशकर सकें तो जान पड़ता है, बहुत ही सहजमें आपका काम सिद्ध हो जायगा।

रंग०—कहते क्या हो, मैं अभी फरमानके लिए दरबार में जाता हूं। सेनापति तो तैयार हैं न?

सिपाही—सेनापतिकी तबियत अच्छी नहीं है।

रंगनाथ—तबियत अच्छी नहीं है! तो फिर तुमको यहाँ किसने भेजा है?

सिपाही—जी, सेनापति क़ासिमखाँ बहादुरने ही मुझे भेजा है। वह इस समय पलंगपर पड़े हैं।

रंग०—अच्छी बात है मैं खुद ही सेनापतिका काम करूँगा, जल्द जाकर सेना और पल्टन तैयार करो।

सिपाही—कासिम खाँकी फौज दूसरेकी मातहतोमें लड़नेके लिए राजी नहीं है।

रंग०—यह क्या! तो फिर कसिमखाँने तुमको मेरे पास क्यों भेजा हैं। मैं अकेले जाकर ही अपना काम सिद्ध कर सकता तो फिर इतने दिनोंसे यहाँ पड़ा हुआ उनकी ताबेदारी क्यों करता?

सिपाही—सेनापतिने कहला भेजा है, कि ऐसा अच्छा मौका फिर हाथ नहीं लगेगा!

रंग—सा तो निश्चय है।

सिपाही—लेकिन सेनापतिकी तवियत खराव है।

रंग०—इतनी देरमें क्या हो गया?

सिपाही—बड़ी भारी वीमारी है। खाँ वहादुरने कहा है, कि उस वीमारीकी दवा आप हीके पास है।

रंग०—हूं।

सिपाही—आज अगर सेनापति आराम हो जायें तो परसों सन्ध्याके पहले आप अपने पुश्तैनी सिंहासनपर विना किसी विघ्नके वैठ सकते हैं।

रंग०—(स्वगत) वही तो लापर्वाहीसे खो दूँगा, लापर्वाही से खो दूँगा! एक लड़कीके पागलपनमें भूलकर कापुरुषकी तरह वाप दादेका राज्य उवारना छोड़ दूँगा!

सिपाही—आज पिछली रातको कूच करनेसे कल दोपहरके पहले ही—

रंग०—हाँ हाँ मैं समझ गया, अव मुझे समझना न होगा

सिपाही—सेनापतिको जैसी हालतमें रख आया हूं, उससे जान पड़ता है वीमारी और भी वढ़ गई होगी।

रंग०—आप ठहरिए, मैं दवा लिये आता हूं।

(रंगनाथका प्रस्थान)

सिपाही—(स्वगत) हायरी दुनियाँ! यहाँ लड़की, लड़का माँ वाप जोरू दोस्त कोई किसीका नहीं है। वावा—खाली अपना मतलव ही है। 'मैं' ही सव कुछ है। 'मैं' साहव जहाँ

सोलह आनेकी जगह अठारह आने पाते हैं वहीं स्नेह, ममता प्रेम-प्यार सब है! और 'मैं' साहबके लेन देनमें दमड़ी-अद्धी भर इधर-उधर होते ही, अंधेरे घरसे खजाञ्ची साहब निकल आकर मनको ऐसा सीधा समझा देते हैं कि तब अपनी ही मा के पेटसे पैदा सगे भाईको भोजन देना आलस्यको सहारा देना हो जाता है, दुधमुही बेटीको बूढ़े खूसटके गले मढ़ने के सिवा उसे सुखी बनानेका और उपाय नहीं रह जाता, जातिका अभिमान महापाप जान पडता है; बाप दादेका धर्म छोड़े बिना स्वर्ग जानेकी और सीढ़ी खोजे नहीं मिलती। इसी तरह सब अपने सुभीतेके माफिक शास्त्र, उपदेश, ज्ञान, तत्व पानीकी तरह समझ बूझकर 'मैं' साहब सोलह आने अपने भोग-सुखपर दखल करते रहते हैं।

वासन्ती—(नेपथ्यमें) मेरा और भला क्या होगा! तुम्हारे सुखके लिए मैं अपने प्राण तक दे सकती हूं।

रंग०--(नेपथ्यमें) तुम्हारा भला ही मेरा भला है--तुम्हारा सुख ही मेरा सुख है।

सिपाही—(स्वगत) यही जी यही, तुम्हारा भला—मेरा सुख! जमा खर्च चाहे जो हो, कैफियतमें ठहरा—मेरा भला, मेरा सुख! हो गई, सरदार खाँ साहबकी बीमारी दूर होनेकी दवा, तैय्यार हो गई। अब शायद यह गन्धमादन पहाड़ उखाड़ कर, कंधे पर लादकर, मुझे ही ले जाना पड़ेगा!

रंग०—(नेपथ्यमें) निश्चिन्त रहो बेटी—तुम निश्चिन्त रहो।

सिपाही—अब निश्चिन्त नगरमें जाकर एक दम निश्चिन्त हो जायगी। (रङ्गनाथका प्रवेश)

रंग०—हवलदार साहब, सेनापतिसे पालकी भेजनेके लिये कहिए; मेरा मंगल चाहने वाली वासन्ती जानेके लिये तैय्यार है।

सिपाही—ऐसे शुभ समयमें आपका वहाँ रहना मुनासिब है।

रंग०—ना ना, हम हिन्दुओंकी लड़कियाँ बापके घरको छोड़ कर जाते समय बहुत रोती-धोती हैं। वह दृश्य मैं नहीं देख सकूंगा। मैं दरबारमें जाता हूं—बादशाहसे फरमान लाना होगा! आज ही पिछली रातको कूंच कर दूंगा।

सिपाही—जो हुक्म। (कुछ दूर जाता है)

रंग०—सुनो सुनो, हवलदार साहब—एक बात पूछनी है। मैं जानता हूं, तुम सेनापतिके विश्वासपात्र पुराने नौकर हो। एक बात पूछूंगा, उसका सच जवाब दोगे?

सिपाही—पूछिये।

रंग०—कासिम खाँकी बीवियाँ खूब सुखसे रहती हैं? वह उन्हें किसी तरहका कष्ट तो नहीं देते?

सिपाही—सुभानअल्ला! कासिम खाँ! बहादुर दुश्मनके सामने दाना हैं, मगर बीवियोंके सामने——

रङ्ग०—बस हो गया! यही पूछना था। मेरी वासन्ती बड़ी दुलारी है।

सिपाही—यह भी कहनेकी बात है जनाब! बन्दगी।

(सिपाहीका प्रस्थान)

रङ्ग०—क्या कर डाला ! क्यों वासन्तीको सेनापतिके हाथ में देना मंजूर कर लिया ! उस सरल, सुन्दर, दिव्य लावण्यमयी साक्षात् धर्म रुपिणी बालिकाके सिवा इस जगतमें मेरा और कोई नहीं है। आज मैंने उस रत्नको अपने हाथसे फेंक दिया ! क्या करूँ—और उपाय नहीं है, प्रबल लालसाकी आगमें अपनी आहुती देकर आज मैं अपनेको भूल गया हूं...अपने ही मनके ऊपर आज मेरा कुछ जोर नहीं है !...अब लौट कहाँ सकता हूं ? खूब समझ रहा हूं कि आगकी ओर झपटने वाले पतङ्गकी तरह मैं उस भयानक लालसाकी आगमें जलकर भस्म हो जाऊंगा; तो भी और राह पर चलनेकी शक्ति मुझमें नहीं है। दुराकांक्षा-की विषम चोटसे कितने ही कुकर्म कर चुका हूं। बुरे कर्म करके आत्म सन्तोष भी प्राप्त किया है। वासन्तीकी हत्या करके भी तृप्त होऊंगा। वह मेरे राज्यसुखका विघ्न है। उसे देकर अगर राज्य पाऊं तो जानो मैं सब कुछ पा गया। राज्यकी तुल-नामें रमणी—तुच्छ—अत्यन्त तुच्छ है। राज्य आवे, स्त्री जाय उसके साथही स्नेह...मोह ममता...सब जाय ! ये सब भाव मरते ही समाप्त हो जाते हैं, लेकिन राज्य सदा रहता है ! राज्य आवे रमणी जाय !

(प्रस्थान)



दृश्य पाँचवाँ।

स्थान—रंगनाथके घरके पास की सड़क।

(चौकीदारका प्रवेश)

स्थान—सोने वाले जागो—होशियार रहो! डेढ़ वजा है होः होः! पाँस दो जवानों अपने मकानसे! रैयत होशियार!

(मुश्किल ग्रासानके वेषमें गोवर्द्धनका प्रवेश)

गोव०—या पीर...

चौकी०—अरे तुम कौन है?

गोव०—फकीर है बाबा, या पीर मौला...

चौकी०—इतनी रातको चिराग जलाकर चिल्लाता है-तुम चोट्टा है!

गोव०—वाह वाह वाह वाह—तुम वड़ा समझदार है! तुम डेढ़ कोससे चिल्ला चिल्लाकर गलेवाजी करता है, और हम इतनी वड़ी मशाल जलाकर तुम्हारे सामने से चोरी करने जाता है!

चौकी०—तुमने क्या चुराया? कहां चोरी की है?

गोव०—चौकीदार साहव यह क्या तुम असङ्गत वात वोलता है? तुमको धोखा देकर चोरी करनेसे उसे धर्म कैसे सह सकेगा? धर्म क्या नहीं है? आज भी तो सोमवारके वाद मंगलवार होता है, नारियलके पेड़में झाड़ू पैदा होती है?

चौकी०—तुम चोर नहीं है? ठीक कहता है?

गोव०—अरे अगर ऐसी वड़ी चोरीकी विद्या जानता तो

फिर हम इतना दुख उठाकर मुश्किल-आसानी क्यों करता? तुम दया करके हमको शागिर्द करेगा?

चौकी०—काहेका शागिर्द?

गोव०—यही चोरीके इल्मका।

चौकी०—क्या हम चोरी करता है?

गोव०—हम क्या यह कहता है? इस समय तो घरमें बैठके बकरा मारता है, मगर पहले तो करता था! जैसे जुगनू नामसे प्रसिद्ध कीड़ा पकते पकते तितली हो जाता है, वैसे ही चोर भी पक्का होते होते चौकीदार बन जाता है। क्यों यही, बात है न?

चौकी०—तुम्हारी बोली कुछ समझमें नहीं आता। तुम कौन देशका आदमी है?

गोव०—उस मुलुकका, जिसमें उल्लूक नहीं होता—यही तुम्हारा ऐसा!

चौकी०—तेरे चिरागके भीतर क्या है?

गोव०—तेल है, और क्या है। लो थोड़ा नाकमें डाल लो और निश्चिन्त होकर सो रहो—मजेसे ख़र्राटे लेने लगोगे मियां!

(तेल लेकर चौकीदारकी नाकमें डालता है।)

चौकी०—क्या तुम हमारी मूछ पकड़ेगा? यह डंडा देखा?

गोव०—अरे डंडा कहां है चौकीदार साहब, यह तो एक रावणका रोयाँ है!

चौकी०—अच्छा साले खड़ा रह, तुमको हम दिखा देगा अपना डण्डा! बस चुपचाप खड़ा रह!

(चौकीदार लट्ठ लेकर मारने दौड़ता है। गोवर्द्धन लट्ठका सिरा पकड़कर पीछे ढकेलता है और चौकीदार गिर पड़ता है। गोवर्द्धनके भी झुक पड़नेसे उसके टीपकसे कुछ पैसे गिर पड़ते हैं)

चौकी०—अरे गिर गया-गिर गया; तुम साला भागा क्यों?

गोव०—बड़ा अन्याय किया? जनाब कोशिश करके हमारा सिर फोड़ेगा और हम चुपचाप खड़ा रहेगा! हम काठके पुतले-की तरह खड़ा नहीं रहा, बड़ा अन्याय किया—क्यों?

चौकी०—तुम डरके मारे हड़बड़ा करके भागा, तभी तो हम गिर गया?

गोव०—हम डरा कहाँ मियाँ? तुमको पकड़ने चला, सो उलटे अपना सब पैसा फेंक दिया।

चौकी०—(जल्दीसे) पैसा कहाँ है—कहाँ पैसा है?

गोव०—वाह-वाह, अब तो तुमने हमारी बोली ख़ूब साफ़ समझ लिया!

चौकी०—बत्ती दिखा भाई।

गोव०—ले साले ले। किसी अन्धे-धुन्धेको दिखानेके लिये चिराग लिये था; ले तू ही ले।

चौकी०—(पैसे उठाकर) तुम बहुत अच्छा आदमी है।

गोव०—तुम इतनी देरमें यह बात समझा। हम बहुत अनु-गृहीत हुआ।

चौकी०—देखो, हम थोड़ी दूर पर, उस मोड़में, खड़ा रहेगा। तुम इस राजाके घरसे जो कुछ ले सको ले लो। जानेके वक्त

हमारा आधा हिस्सा देते जाना। हो! सोनेवाले जागते रहो—

(प्रस्थान)

गोव०—आहा, सच है, सत्संगसे काशीवासका फल होता है!

(सिरसे पैर तक चादर लपेटे हुए सरजू का प्रवेश)

सरजू—फ़क़ीर साहब—

गोव०—या पीर—

सरजू—चुपचुप (अशर्फी देकर) यह लो। आज रातको तुम्हें अब भीख मांगनेकी जरूरत नहीं है। अपना यह चिराग लेकर जरा मेरे साथ चलो न!

गोव०—अब यह और कौन है बाबा? अजी तुम्हारा क्या मतलब है?

सरजू—कुछ नहीं, अपने चिराग़की रोशनीमें रंगमहल तक मुझे पहुंचा आओ। मैं तुम्हें और भी बकसीस दूंगी।

गोव०—ओः रंगमहलमें जा रहीं हैं? श्रीमतीका अभिसार है क्या? सो मैं ललिता-विशाखा भी नहीं हूं, सुदामा और सुवल भी नहीं हूं। आप और राह देखिए मालकिन!

सरजू—एक औरतको जरा राह दिखानेकी हिम्मत नहीं पड़ती क्या?

गोव०—जी नहीं, ऐसे अभिसारके कामोंमें कोई नहीं हूं। वल्कि चलो, धीरे धीरे तुम्हें तुम्हारे घर पहुंचा आऊं।

सरजू—बात-चीतसे तुम भले आदमी ही जान पड़ते हो। विश्वास करो, मेरा कोई बुरा इरादा नहीं है।

गोव०—खुदाकी कसम?

सरजू—मैं हिन्दूकी बेटी हूं।

गोव०—हिन्दूकी बेटी हो? इसीसे तुम रंगमहलमें जाना चाहती हो? उसके बदले चलो, मैं यह दीपक साथ लिये चलता हूं, भीमा नदी यहांसे बहुत दूर नहीं है। 'लो भैया' कहकर दो एक छलांग; कहो तो मैं पीछेसे ढकेल देनेके लिए भी राजी हूं। तह पर तोफ़ा नर्म बिछौना है—और बड़ी ही ठंडक है। मजेमें नींद आवेगी। चलो—

सरजू—तुम कौन हो? हिन्दूकी बेटी सुनकर मुझे रंग-महलमें जानेके बदले भीमाके जलमें जान देनेके लिए कहते हो, तुम कौन हो?

गोव०—मैं मुश्किल-आसान हूं। मरने पर सब मुश्किलें-आसान हो जाती हैं! इसीसे तुम्हें सीधी राह दिखाये देता हूं।

सरजू—ठहरो तो—ठहरो तो—तुम फिर बात चीत करो।

गोव०—यह क्या—चोर चोर मौसेरे भाईवाला मसला है क्या?

सरजू—चुप क्यों रह गये? जरा रोशनी ऊंची करो। निश्चित वही है—तुम्हारा नाम क्या गोवर्द्धन है?

गोव०—तुम या तो भग्गूकी मा हो, या दीदी हो। यहां और तो कोई औरत मुझे पहचानती ही नहीं है।

सरजू—मैं तुम्हारी वही वहन हूं-यह देखो।

(चादर हटा देती है।)

गोव०—यह क्या दीदी है!

सरजू—मन नहीं मनता!

गोव०—ना, माननेको मन नहीं चाहता। मेरी दीदी कहां है?

सरजू—तुम्हारी और कौन दीदी हैं?

गोव०—मेरी दीदी सागरसे उत्पन्न दूधकी धोई वैकुण्ठेश्वरी है! मेरी वहन चांदकी धोई सरस्वती है! मेरी दीदी वादशाह की वाँदी नहीं है। मैं ने अपनी दीदी को देखा था, वह ओससे तर हारसिंगारका फूल थी। और, तुमको देखता हूं, तुम वाग का वेहया वेला हो।

सरजू—और अगर मैं कहूं कि मेरा वही भाई आज पेटकी ज्वालासे फकीर वना हुआ है, तो?

गोव०—ना, यह वात नहीं है। मेरे हाथमें मुश्किल-आसान का चिराग है, मगर हृदयके भीतर तुम्हारे मुखका प्रकाश है सेनापतिकी आज्ञासे ही आज मैंने अपनी यह हालत वना रक्खी है!

सरजू—वही तो कहती हूं, वाहरके वेषको तुमने अभी तक नहीं पहचाना हूं मैं जो रंगमहलमें जाती हूं सो भी एक वड़े भारी कामसे। तुम अपने सेनापतिकी आज्ञाका पालन कर रहे हो, और मैं आज अपने प्राणेश्वरका उद्धार करनेके यत्नमें लगी हूं।

गोव०—प्राणपति! ओ दीदी, तुम्हारे स्वामी हैं! उस दिन तुमने कहा क्यों नहीं! वह कहाँ हैं?

सरजू—इसी घरमें।

गोव०—यह तो राजा रंगनाथका घर है।

सरजू—वही मेरे स्वामी हैं।

गोव०—ओ दीदी, तुम कहती क्या हो? मुझ ऐसे ऐरेगेरे निकम्मेको तो तुमने आदमी बना लिया, और जो तुम्हारे सबसे बढ़कर अपने हैं, उन्हें माया मोहका बंधन कैसे काटने दिया। ओ दीदी, तुम सब कर सकती हो, मंत्र पढ़ो...मंत्र पढ़ो...बीज-मंत्र पढ़ो! तुम्हारा शिव शव होकर मसानमें पड़ा हुआ सो रहा है! उसे जगाओ...जगाओ; कैलाशनाथको कैलाशमें ले जाओ!

सरजू—उसीके लिये—उन्हें ले आनेके लिये ही यहाँ आई हूं। चलो तुम से सब बातें कहूंगी; उनसे मेरी भेट हो चुकी है; पर वह मुझे पहचानते नहीं हैं।

गोव०—(गानेके स्वरमें) तारा तुझे पहचान सकता कौन है।"

सरजू—चुप-चुप। मैं अभी उन्हींके घरसे आ रही हूं। राज्यके लोभ से वह एक भयङ्कर कुकर्म करनेको तैयार हैं।

गोव०—जानता हूं दीदी जानता हूं; वही कासिमकी कार-स्तानी न?

सरजू०—हां; स्वामीने राज्यके लोभसे मेरी बासन्तीको उस लम्पटके हाथमें देना मञ्जूर कर लिया है। उसका उद्धार करना होगा।



गोव०—अच्छी वात है; उसके लिये अव क्या चिन्ता है?

सरजू—बड़ा कठिन काम है—कर सकोगे? भरोसा होता है?

गोव०—भरोसा है तुम्हारे इस स्नेह पूर्ण मुँहका, भरोसा है "दीदी" इन दो अक्षरोंके बीज मन्त्रका। आओ दीदी चलो—आओ। इस समय मैं कासिमका बड़ा प्यारा दोस्त हूं। उस पाज़ीने तुम्हारे इस गुणी भाईको अच्छा और अपने कामका आदमी समझकर उस लड़कीका सर्वनाश करनेका काम सौंप दिया है—इसी कामके लिये घूमनेपर बहाल किया है!

(प्रस्थान)



दृश्य छठां।

स्थान—भीमा नदीके किनारे कासिमका विलास भवन।

(कासिम खां बैठा शराब पी रहा है। चारों ओर नाचनेवालियां खड़ी हैं। पास गोवर्द्धन खड़ा है।)

(नाचनेवालियां गाती हैं।)

(गीत)

वही रूप आंखोंमें है वसा, दिलमें समाई हंसी है वह।
मन अपने वशमें नहीं रहे, हुई है मुसीवत कैसी यह॥
नहीं देखा जानें नहीं जिसे, नहीं जानते कि है कौन वह।



क्यों हृदय उसीको है चाहता, कहता—"उसी पै निसार रह" ॥
मनने उसे खुद है गढ़ा, है उसीका खयाल हृदयको भी।
उसका मनोहर रूप वह, अजी देखता हूं मैं सर्व जगह ॥
अपनेको भूलते नैन ये जब देख लेते कहीं उसे।
उस माधुरीमें रहे मगन मेरा हृदय दिन-रात यह ॥

कासिम—वासन्ती, बीबी मेरी बेगम होगी! क्या तोफा है-क्या तोफा है–दिल खुश कर दो मुश्किल-आसान मियां!

गोव०–(स्वगत) किस तरह दिल खुश करना होगा, वही सोच रहा हूं। ऐसा खुश करूं कि जन्म भर याद रहे? आधे तोलेमें अण्टाचित्त और पूरे तोलेमें बाजी-मात। हा-हा-हा, कालाचांद अफीम; जीते रहो। पकी हुई छोड़कर कच्ची खाने-से आज बड़ा ही सुभीता हुआ। (गानेके स्वरमें)" काला रूप इसीसे भाता-"

कासिम--क्या सोच रहे हो आसान-मियाँ? शीराजीका गिलास दो; दिल खुश हो---दुनिया हंसे।

गोव०—यह लीजिये जहाँपनाह--(मदिराका पात्र देता है)

कासिम--(मदिराका पात्र खाली करके) वाह--वाह--वाह--वाह कैसी मीठी रंगीन शीराजी शराब है। गाओ परियो—नाचो--गाओ-मौज मनाओ।

(नाचनेवाली गाती है।)

(गीत।)

सजनी, मधुर अधरसे रसिकको बाँटनेही के लिये।—



हम सब खिले हैं; रङ्ग-रस यह है सनेही के लिये ॥

दो०—भरा हृदयमें यह अमृत रूप रङ्गके सङ्ग।
रोक रख सकें हम नहीं इसकी बढ़ी उमङ्ग॥

जी खोलकर अनमोल यह लेलो सनेही के लिए।
सजनी, मधुर मधु रस० ॥

दो०—कौन पियासा है, यहाँ आये वह दिलदार।
अपनी सुधबुध भूलकर हो जावे सरशार॥

है स्वर्गका सुखभोग यह हाजिर सनेही के लिये।
सजनी, मधुर मधु रस० ॥

दोह०—बासीका आदर नहीं करता है संसार।
ताजेको सब चाहते ? देखो आँख पसार॥

तैयार ताजे फूल हैं ये चतुर प्रेमीके लिये।
सजनी, मधुर मधु रस०।

क़ासिम—जाओ परियो, अपने घर जाओ। मेरी जान बीबी वासन्ती आती होगी—

(नाचनेवालियोंका प्रस्थान)

(सिपाहियोंके साथ वासन्तीका प्रवेश)

क़ासिम—आओ बीबीजान।

वासन्ती-मैं एक साधरण दासी हूँ, मुझे आप यह क्या कहते हैं ?

कासिम—तुम कुत्ते काफिर रङ्गनाथके यहाँ एक साधारण दासी थीं—

वासन्ती-मैं आपसे हाथ जोड़कर विनती करती हूं और



कहती हूं, मेरे आगे उनकी निन्दा न कीजिये। उनकी निन्दा कानसे सुननेसे भी ईश्वरका मुझपर कोप होगा।

कासिम—वह अगर तुमको रानी बनाता, तो मैं उसकी निन्दा नहीं करता। खैर, जाने दो, वह बात छोड़ दो; अब तुम मेरी बेगम होकर महलोंमें रहोगी। बीबी जान, मेरे यहां तुम्हारा सुख और आराम देखकर सब लोग कुढ़ेंगे।

वासन्ती—काहेको सुख? मुझे वह सुख न चाहिये।

कासिम—यह क्या बीबीजान! बेसुरी बात न कहो। तुम थीं नौंकरानी, अब होगी राजरानी! खुशी मनाओ बीबी जान खुशी मनाओ।

वासन्ती—मुझे नौकरानी कौन कहता है...मैं राजरानी हूँ। मेरे दीनानाथ मेरे सर्वस्व हैं। उन्होंने मुझे सब सुख देकर सुखी बना रखा है; मुझे कोई दुःख नहीं मैं दासी हूं, कहिए, क्या काम करना होगा?

कासिम—बीबी, ये सब रटी हुई बे मजेकी बातें छोड़ दो बीबी, सुनो वासन्तीबाई, अब नीच दासीवृत्तिकी चर्चा न चलाओ। मेरी बेगमोंमें तुम्हारी कितनी इज़्ज़त, दौलत और शान होगी; कितनी हुकूमत होगी...इसकी भी तुम्हें कुछ खबर है बीबीजान?

वासन्ती—नहीं मालिक, इस संसारकी दौलत और हुकूमत की मुझे अभिलाषा भी नहीं है, अधिकार भी नहीं है।

कासिम—मैं जानता हूं, उस कमबख्त काफिर राजाके यहाँ

तुम्हारी कोई साध पूरी नहीं होती थी-तुम किसी तरहकी खुशी नहीं मना सकती थी...इसीसे तुम्हें कोई हौसिला नहीं होता। एक काम करो वासन्ती बीवी दुनियां अगर तुम्हें इतनी अँधेरी मालूम होती है तो (मदिरासे भरा गिलास दिखाकर) मेरा यह रङ्ग-दार शरबत जरा पीलो। दुनियाका सुख तब समझ में आवेगा बाईजी! बीबीजान, मेरी दुनिया है सुखका बाजार।...यहाँ आई हो, तो अच्छी तरह मजा लूटो और मौज करो।

वासन्ती—(रोती हुई) दीनानाथ!

कासिम—रोती क्यों हो बीबीजान? इतना समझा रहा हूं। फिर भी तुम्हें काहेका दुःख है?

वासन्ती—दुःखसे नहीं, अपमानसे रो रही हूं! जिसने उस दीनानाथको आत्मसमर्पणकर दिया है उसे लोग किस साहससे लोभ दिखाते हैं?

कासिम—नहीं बीबी, मैं लोभ झूठा नहीं दिखाता। मेरे यहां सब सच्चा मामला है। सचमुच मैं तुम्हें अपनी बना लूंगा और जानसे बढ़कर चाहूंगा। बोलो तुम मेरी हो?

वासन्ती—आपको लेकर मैं क्या करूंगी! जो इस सारे संसारको पैदा करते पालते और मारते हैं, जिनके अनन्त रूप हैं, जिनके ऐश्वर्यका अन्त नहीं है, उन्हीं दीनानाथकी मैं हूं। उनका सब ऐश्वर्य और धन मेरा ही है। जो उन दीनानाथके प्रेममें डूब रहा है वह क्या और किसीको चाहता है? मालिक, दुनिया भरकी और आपकी सम्पत्तिके सारांशरूप-वासन्तीके जीवनधन

दीनानाथकी पूजा-उपासना करो। साधारण स्त्रीके लिये लाय लाय मत करो।

कासिम—अब भी वही बातचीत—सरदार कासिमखां कोई नहीं है ?

वासन्ती—सचमुच मालिक, इस समय सरदार मेरे कोई नहीं है। हां, जिस दिन वह मेरी ही तरह मेरे दीनानाथको पुकारेंगे, उसी दिनसे वह मेरे इष्टदेव हो जायंगे।

कासिम—फिर वहीं रूखी कविता। मैं एक बातका जवाब माँगता हूं, तुम मेरी होगी या नहीं ?

वासन्ती—छी—छी, फिर वही बात।

कासिम—वासन्ती, तुम सज़ासे डरती हो ?

वासन्ती—मनुष्यके निकट नहीं डरती।

कासिम—अगर मैं तुम्हें कैदखानेमें डलवा दूँ ?

वासन्ती—उसमें कष्ट ही क्या है, वहीं बैठकर दीनानाथका नाम जपूँगी, कैदखाना मेरे लिये देवताका मन्दिर बन जायगा। मालिक, जितना हो सके दुःख दो। दुःख पाये बिना उन दीनानाथके पास कैसे जाऊंगी, दुःखही तो सुख है।

कासिम—(गोवर्द्धनसे) बीबीजान टूटी फूटी लफ्जोंमें क्या कह रही हैं, मियाँ साहब सुनो। समझे आसान मियां, मेरी तबियत कमजोर हो रही है ; तुम बीबीको समझाओ।

गोव०—हजूर इतने लोगोंके बीचमें यह नई चिड़िया कैसे फंदेमें आ सकती है ? भीड़ जरा कम कर दीजिये।

कासिम—ठीक कहते हो आसान-मियाँ। खोजा पहरेदार सबको हटा दो। सिर्फ दो आदमी रह जाँय, तुम और मैं क्यों?

गोव०—ठीक ठीक; अब देखिये सोनेके पिंजड़ेसे सोनेकी चिड़िया कैसे निकल जाती है। मैं इन ढंगोंको खूब जानता हूँ। (पहरेदारोंके पास जाकर) हटो सालो, हटो—हटो—देखते क्या हो सालो, देखते क्या हो। मुँह फैलाये देखते क्या हो। हटो हटो, निकलो—

(गोवर्द्धन कासिम और वासन्तीके सिवाय सबका प्रस्थान)

गोव०—(स्वगत) अरे बापरे! देखता हूं, साला मेरी चौदह पीढ़ियोंसे बढ़कर नशेबाज है! मेरी झोली खाली हो गई; तोला भर अफीम खाया; अभी नशा जमा है कुछ कुछ आँखोंमें झपकी आने लगी है! सोचा था सालेको एकदम नशेमें गड़पकर दूंगा मगर अब देखता हूं, हम बंगाली जैसे नैवेद्यका मोहनभोग थाली भर-भर उड़ा सकते हैं, वैसेही यह आबकारीका भूत भी बोतलें हजम कर सकता है। अब इन व्यर्थ बातोंकी जरूरत नहीं है। इस लड़कीके बचनेका कोई उपाय करना होगा। (कासिमको उठते देखकर) बस अब नाकपर घूंसा जमाता हूं, अब जाओगी कहाँ बीबी, आओ. आसान मियां जरा दूर रहो—

(वासन्तीका हाथ पकड़ना चाहता है)

वासन्ती—दीनानाथ तुम कहां हो! (दौड़कर भीमा नदीके किनारे परके द्वारपर खड़े होकर) भैया, मुझे अपनी गोदमें लो।

[भीमा नदीके जलमें फाँदती है]

गोव०—(दौड़ जाकर) दुश्मन !

(कासिमको मारना और उसका गिर पड़ना)

नेपथ्यमें—दीनानाथ !

गोव०—जा—सब काम बिगड़ गया ! बेहद अफीमने ऐसा काम कर डाला ! जाओ कालाचांद, अब तुम्हारा मुंह नहीं देखूंगा ! (अफीमकी डिबिया भीमाके जलमें फेंक देता है) अरे अफीमी, तूने क्या किया लड़कीको बचा नहीं सका। आहा बेचारी लड़की की हड्डी पसली चूर हो गई होगी ! दीदी, देख जा देखजा, जो कभी नहीं देखा वही देख जा, गोवर्द्धनकी आंखोंमें आंसू देखजा छी छी रोता क्यों हूं ? वह लड़की मर जायगी इसलिये, मर जायगी तो क्या होगा; वह तो अपने दीनानाथके पास जा रही है। गोवर्द्धन, मत रो—मत रो। तूने ठीक ही काम किया है वासन्ती बच गई; शैतानके हाथसे बच गई; पापीके हाथसे उसकी रक्षा हो गई। और क्या चाहता है गोवर्द्धन, वह देख हंसता हुआ चांद निकल रहा है, भीमा नाचती हुई बह रही है, वायु मीठे सुरोंमें गा रही है। आज सारा विश्व वासन्तीके बचानेकी खुशीमें मस्त हो रहा है। धन्य गोवर्द्धन, तू धन्य है ! आनन्द मना भाई, आनन्द मना, जी भरकर आनन्द मना ! मैया आनन्दमयी—

(भीमाके जलमें फांद पड़ता है)

पर्दा गिरता है।

ड्राप

तीसरा अंक.

दृश्य पहला।

स्थान—जहानाराके महलका बाहरी हिस्सा।

(सरजू और रंगनाथ)

रङ्ग०—शाहज़ादी कहां हैं?

सरजू—बादशाहके महलमें।

रङ्ग०—बादशाहने आज दरबार नहीं किया?

सरजू—कह नहीं सकती, जान पड़ता है तबियत ठीक नहीं है।

रङ्ग०—तो फिर मुझे रङ्गमहलमें किसने बुलाया है?

सरजू—मैंने। मेरा हुक्म था।

रङ्ग०—तुमने! तुम भी क्या कुछ हो गई हो?

सरजू—आप मुझे क्या समझते हैं? हुक्म-उक्म देखकर समझ नहीं पाते कि मैं कौन हूं।

रङ्ग०—बोलचाल तो तुमने खूब शाहजादियोंकी ऐसी दुरुस्त कर ली है!

सरजू—मुझे भी आप एक छोटासा बादशाह समझिये।

रंग०—अच्छा तो अब बताइए; इस तावेदारको क्यों तलब किया गया है?



सरजू—दो चार बातें कहनेको जी चाहता था। मैं कहती हूं, इन मुग़लोंके घरमें आप और कबतक मेहमान रहेंगे?

रंग—जबतक विधाताने लिख दिया होगा।

सरजू—विधाताने अगर जन्मभरके लिये लिख दिया होगा तो क्या आप जन्म भर यहां रहकर मुग़लोंकी गुलामी करेंगे।

रंग०—उसके सिवा उपाय क्या है?

सरजू—आपका 'यह उत्तर क्या बुद्धिमानका सा है हिन्दूका सा है?

रंग०—सब समझता हूं; समझता हूं कि मैं यह कायरोंका सा काम कर रहा हूं; समझता हूं कि नाचीज निकम्मे नालायक नराधमका काम कर रहा हूं। समझता हूं कि हिन्दू होकर दुश्मनकी गुलामी कर रहा हूं। लेकिन उपाय नहीं है। मेरी नस—नसमें...रक्तकी हर बूंदमें राज्यकी लालसा बसी हुई है! सरजू, एक ओर राज्य हैं दूसरी ओर स्वर्ग है। राज्यके बदले मुझे अगर कोई स्वर्ग दे तो मैं स्वर्ग भी नहीं चाहता राज्य मेरा प्राण है...राज्य मेरा सर्वस्व है!

सरजू—राज्य पानेका अब क्या भरोसा है?

रंग०—बादशाह कहते हैं—है। किसी तरह राजारामको मारा जा सके तो फिर दखिखन भरमें मेरा ही अधिकार होगा।

सरजू—क्या बादशाह राजाराम और उनकी मरहठी सेनाके प्रतापको मन-ही-मन नहीं जानते मानते? राजारामने बादशाह की फौजको चक्करमें डाल रक्खा है...एकदम नेस्त-नाबूद

किये डाल रहे हैं...बादशाहके सरदार और सिपाही घबरा गये हैं।

रङ्ग०—यह सच हो, इससे क्या? एक पत्ता तोड़ डालनेसे कहीं जङ्गल उजड़ सकता है? बादशाहका प्रताप एक सागर है! उनकी बीस पच्चीस हजार फौज अगर मार ही डाली गई तो क्या हुआ? समुद्रसे दो चार कलसी जल निकाल लेनेसे क्या वह जलशून्य हो जायगा?

सरजू—मैं कहती हूं कि हिन्दू सन्तान अगर कोर्मा-कबाब-की गन्ध न सूंघ कर अपने देशको जाय तो अच्छा न होगा क्या?

रंग०—जाऊंगा, सरजू, एक दिन जाऊंगा—या तो राजेश्वर होकर जाऊंगा, और नहीं तो फकीर होकर जाऊंगा। वह दिन अब बहुत दूर भी नहीं हैं।

सरजू—इस समय भी वही सपना हैं! अब भी वही दुराशा है।

रङ्ग०—यह बात जाने दो सरजू रङ्गमहलमे मैं आया हूं तो क्या बादशाहजादीसे एक बार भेंट न हो सकेगी?

सरजू—कुछ कहना है?

रंग०—कुछ नहीं; खाली मिलना है।

सरजूके देखनेसे काम नहीं चलेगा? फिर शाहजादीको देखकर क्या होगा?

रंग०—शाहजादीको देखना आंखोसे देखना भर है। सरजूको देखना हृदयका काम है।

सरजू—रोगने पकड़ लिया ?

रंग०—खाली मुझे ही-तुम्हें नहीं ?

सरजू—मैं जाकर शाहजादीसे कहती हूं; आप यहीं ठहरिये। डरियेगा नहीं; रंगमहलमें तरह-तरहकी डायनें घूमती हैं; कोई सिरपर न सवार हो जाय। मैं जाती हूं।

(सरजूका प्रस्थान)

रंग०—सौन्दर्यके साथ मधुरताका मेल कैसा सुखमय, कैसा मनमोहन है! ऐसी स्त्री जिसकी बगलमें हो, उसका जन्म सफल है, जीवन सफल है। लेकिन मैं यह कैसा दुःसाहसका काम कर रहा हूं! अगर किसी तरह यह प्रकट हो जाय कि मैं रंगमहलमें इस तरह आता जाता हूं तो फिर धड़के ऊपरसे यह सिर फौरन अलग होकर जमीन पर गिर पड़ेगा। उसे जोड़नेवाला आदमी कोई न रहेगा। ना, अब यह दुःसाहसका काम नहीं करूंगा। (दूरपर बादशाहको आते देखकर) भगवान, यह क्या किया? बचनेका मौका भी नहीं दिया? बादशाह आ रहे हैं!

(खोजेके साथ औरङ्गजेबका प्रवेश)

औरंग०—बेअदब, तू रंगमहलके भीतर कैसे आया ?

रंग०—जहाँपनाह! माफ कीजियेगा, गुलाम इस प्रश्नका उत्तर देनेमें असमर्थ है।

औरंग—क्या तू मेरा हुकुम नहीं मानेगा? नहीं कहेगा?

रंग०—जहाँपनाह, मुझे फांसीकी सजा देदें...वह..मैं

चुपचाप सह लूंगा। मगर मुझसे इसके लिये कुछ न पूछिए।

और ंग०—रंगनाथ, मैं तुझसे बड़ी मोहब्बत करता था। तूने वह मोहब्बत नहीं रहने दी; उस मेहर्बानीको लेना तू नहीं जान सका। एहसानफरामोश पाजी! खूब तूने मेहरबानी और मोहब्बतका बदला दिया! अब उसका बदला भोग। (खोजासे) इसी घड़ी इसे कैदखानेमें ले जा।

(सबका प्रस्थान)

(सरजू और जहानाराका प्रवेश)

सरजू—शाहजादी, आपके सिवा इस अभागिनका और कोई नहीं है। आपके अनुग्रहकी भीख मांगने आई थी, काफी तौरसे आपने अनुग्रह किया भी। लेकिन विधाता मुझ पर कोप किये हुए हैं। उनके विमुख होने हीसे अब मेरी सब आशा मिट गई—मैं मिट्टीमें मिल गई। शाहजादी, स्वामीको फाँसी होगी, सरजू पागल होकर राह-राह रोती कलपती मारी-मारी फिरेगी! दिल्लीकी शाहजादीका पंजा पानेसे शायद मैं अब भी अपने स्वामीको बचा सकूं। दया कीजिये, शाहजादी।

जहा०—दया, सरजू! अगर मैं छाती चीर कर उसका खून देकर तुम्हारे स्वामीको छुड़ा सकूं तो मैं अभी उसके लिये तैय्यार हूं। लेकिन ऐसी बात नहीं है। तुम बादशाही तख्तका कायदा नहीं जानतीं। जहानारा इस वक्त रंगमहलकी कुतियाके बराबर है; उसके पंजेकी अब कुछ कदर नहीं है।

बादशाहका हुक्म अब तक चारों तरफ जाहिर हो गया होगा।

सरजू--फिर--फिर क्या होगा? कहां जाऊं-क्या करूं? प्रभु, स्वामी, मेरे सर्वस्व,-जबतक दम है, तबतक तुम्हें बचानेका यत्न करूंगी। शाहज़ादी।--

(प्रस्थान)

जहा०--खुदा! यह क्यों किया? क्यों मुझे शाहज़ादी बनाया था?

(प्रस्थान)

दृश्य दूसरा।

स्थान--पहाड़के ऊपर कालीका मन्दिर।

(राजाराम और उनके साथी)

राजाराम--"अजामेकां लोहितशुक्लकृष्णां
बह्वी प्रजा सृजमानां नमाम।"

मेरे अंधेरे हृदयको प्रकाशित करके उसमें प्रकट हो जाओ जगदम्बे! मेरे फूल, फल, वृक्ष, लता, पर्वत और वनमें, मेरे नदी-प्रवाहमें, सागरतरंगमें, मरुभूमिके मैदानमें, मेरे ग्रह, तारा- सूर्य्य-चन्द्र आदिमें, मेरे अनन्त विस्तृत नील आकाशमें अपनी विश्व-विमोहनी रूपछटा छिटका दो मैया! मेरी मैया तुम हो--

"घोररूपा महारौद्रा श्मशानालयवासिनी।
शवरूपमहादेवहृदयोपरिसंस्थिता,,॥

सत्स्वरूपिणी आनन्दमयी श्यामा, मेरे ब्रह्माण्डका सब अंश ढका जारहा है। मेरी पत्रपुष्प शोभिता शस्यश्यामला वसुन्धरा-मेरा चन्द्र-तारा-मण्डित नील नभोमण्डल...सब तुमने अपने काले केशोंसे छालिया है! ठहरो; मुक्तकेशी मैया, ठहरो; मेरे हृदयके मसानमें अपने घनकृष्ण केशोंको बिखेर कर ठहरो; जिन केशोंके जालसे सारे विश्व-संसारको अनन्त रहस्यके जालमें ढक रक्खा हैं उन्हीं केशोंको फैलाकर ठहरो। मैं एकबार इन्द्रियोंको मनमें, मनको बुद्धिमें, बुद्धिको आत्मामें लीन करके तुम्हारे भुवन-व्यापी काले रूपकी शोभासे अपने हृदयको परिपूर्ण कर लूं। (प्रतिमाके सामने खड़े होकर) मैया, मेरी प्राणप्रतिष्ठा सार्थक हो-गई। अनाद्या देवी, तुममें अगर डूब गया था तो फिर क्यों उठा मैया? मैया, मेरी विश्वकी स्मृति फिर आई है; मुझे बहुत ही प्यारी मरहठा जातिकी दशाका ख़याल हो आया है। हे पतितोंका उद्धार करनेवाली शिवे, इन लोगोंको तुम अपने चरणों में स्थान दो-पैरोंसे न ठेलो।

सब—जय, मैया; करांली कालीकी जय।

राजा०—बन्धुओ! भाइयो और महाराष्ट्र देशके वीर पुत्रो! तुम क्या जानते हो कि आज हम सब लोग यहाँ पर क्यों जमा हुए हैं? मुगलोंके पाशविकअत्याचारसे आज भारतकी एक सरहद्से दूसरी सरहद् तक त्राहि त्राहि मची हुई है। दक्खिन

में घर घर हाहाकार सुन पड़ता है। सती स्त्रियोंकी लम्बी साँसोंसे, बालकोंके करुण क्रन्दनसे, वृद्धोंके मर्मभेदी शोकोच्छ्वाससे आज धनजनपूर्ण दक्षिण देश भरमें मसानकी कराल छाया देख पड़ती है! इसीसे आज इन करालवदना श्मशानालयवासिनी भैरवीकी पूजाका अनुष्ठान होनेवाला है। मसानमें श्मशानप्रिया कराली काली की पूजा होगी। उस पूजाकी सामग्री आत्म-त्याग हैं। उस पूजाका महामंत्र तेज तलवारकी विपुल झंकार और वीरोंकी हुंकार है। उस पूजाका महाफल मनुष्यकी चिरकांक्षित मुक्ति है। उसी मुक्तिकी कामनासे मैं माताके चरणोंमें अपनी बलि चढ़ानेको उद्यत हुआ था। भैयाने कहा—आत्म नाश सहज है; आत्मजकी बलि दो, तब कामना पूर्ण होगी। इसीसे आज भैरवीके चरणोंमें अपने एक मात्र पुत्रकी बलि दूंगा। दक्षिणके वीर पुत्रो, तुम मुझे प्राणोंसे बढ़कर प्यारे हो।—आओ, सब मिलकर इस महाकार्य्यमें मेरी सहायता करो।

सब—(आश्चर्यसे) ऐं—यह कैसी बात आप कहते हैं!

राजा०—विचलित क्यों होते हो? महा ममताके लिये क्षुद्र ममताका त्याग करना होगा! कौन किसका पुत्र है? तुम लोग देखते हो कि रघुराम मेरा बेटा है, मगर मेरी दृष्टिमें यह बात नहीं है। महाराष्ट्र देशके हर घरमें मेरे लड़के-लड़की हैं! फिर क्यों विचलित होते हो? जाओ, मेरे पुत्रको ले आओ।

(तानाजीका प्रवेश)

तानाजी—यह लो मैया, मैं आ गया ; मैं तुम्हारा पुत्र हूं।

राजा०—यह क्या, आप अपनी इच्छासे आत्मबलि देने क्यों आये हैं?

तानाजी—हाँ भैया, मेरी बलि दो' मेरे रुधिरसे अष्टभुजाको तृप्त करो।

राजा—माताने आत्मजकी बलि मांगी है, आत्मज ही की बलि दूंगा।

तानाजी—महाराष्ट्र देशके हर घरमें जिसके लड़की-लड़के है उसका बेटा क्या तानाजी नहीं है? भैया राजाराम, मैयाने तुमसे जो मांगा है, उसका मर्म तुम्हारी समझमें नहीं आया। याद रक्खो, इस पर्वतमालापूर्ण विस्तृत वसुन्धराकी ओर देखो! यह अनन्त विस्तृत श्यामा वक्षःस्थल ही अनन्तमयी अन्नपूर्णाका मन्दिर है! इस मन्दिरमें लाखों मुग़ल लाखों हाथोंमें लाखों तलवारें लिये बलिदान करने आ रहे हैं! अगर माताकी पूजामें बलिदान चाहते हो, तो आत्मा और आत्मज आदि सबको लेकर वहीं पर जाओ। जीवनमें अब फिर ऐसा सुयोग नहीं आयेगा। अगर यह नहीं कर सकते तो वृथा पुत्रकी बलि देनेसे कोई प्रयोजन नहीं निकल सकता।

(तानाजीका प्रस्थान)

राजा०—तानाजी अन्तर्य्यामी हैं! उनकी आज्ञा मेरे लिये शिरोधार्य है!—महाबली वीर महाराष्ट्र सन्तानों, आओ भाई, हृदयमन्दिरमें रक्ताक्तदेहा रणरंगिनी चण्डिकाकी मूर्त्ति स्थापित

करके युद्धकी लहरोंमें फांद पड़ें। देखो, कहां कौन कायर मरनेके डरसे जान चुराये पड़ा है।—अपने हृदयके मंत्रबलसे सबके हृदयमें बल पैदा करो। सबको यह शिक्षा दो कि भोगमें मुक्ति नहीं है, विलासमें मुक्ति नहीं है, कायरोंके योग्य पशुजीवन धारण करनेमें मुक्ति नहीं, मुक्ति त्यागमें है, मुक्ति आत्मत्यागमें है, मुक्ति अपने धर्म और देशके लिये जान देनेमें है। जय, माता भैरवी की!

सब—जय, माता भैरवीकी जय!

दृश्य तीसरा।

स्थान—कैदखानेके सामनेका हिस्सा।

पहरेदार टहल रहा है

पहरेदार—(स्वगत) ना, नसीब बहुत ही बेढङ्गा देख पड़ता है! यह पहरेदारी भी खतम न होगी, और मन बहलानेके लिये कोई साथी भी नहीं जुटेगा। दिन-रात क्या इस कैदखानेकी घड़ियां गिन कर काटने पड़ेंगे! क्या करूंगा—नसीबही हेठा है! और बादशाहकी अक्ल तो देखो! मुझ ऐसे समझदार तालीम-याफ्ता होशियार खानदानी जवान को फौजका सरदार न बना कर बनाया क्या? एक पहरेदार,—सो भी रङ्गमहलका नहीं—कैदखानेका! उसपर महीने भरपर तनख्वाह इतनी थोड़ी मि-

लती है कि दिन-रातमें एक वक्त भी भर पेट खाना नहीं नसीब होता। हाड़ तोड़नेवाली मिहनत और उसपर चौथाई पेट खाना, इससे देह ऐसो होगई है कि किसी दिन घुने ढांचेकी तरह पेटसे टूटकर गिर पड़ेगी। मुझे तो ऐसे ही लच्छन देख पड़ते हैं।

(सिपाहीके वेशमें गोवर्द्धनका प्रवेश)

गोव०—भाई, तेरी देह गिर पड़ेगी—मेरी तो गिर पड़ी है।

पहरे०—कौन हो भैया? यह तो नया चेहरा देख पड़ता है।

गोव०—क्या करूं दादा! खूब अच्छी तरह था, दरबारमें पहरा देता था, दौड़ धूप या मेहनत कुछ नहीं थी, दो-चार दिन अन्तरा देकर दरबार लगता था, दो एक घंटे मूछोंपर तांव देता हुआ गलाफुलाकर सबको लाल-लाल आंखें दिखाता था—बाद्-शाहसे पहले मुझे ही लोग सलाम करते थे। अमीर-उमरा लोगोंसे दो पैसे भी मिल जाते थे। साले सिपहसालारसे यह नहीं देखा गया। वह अपने साढ़के समधीके चचेरे भाईको ले आया और उसे मेरी जगह रख दिया। मैं अपने कामसे बरत-रफ हो गया। आजसे मुझे भी भैया, तेरी तरह कैदखानेमें झाड़ू देनी पड़ेगी।

पहरे०—वही तो दादा, देखता हूं, तेरा हाल भी कुछ कुछ मेरा ही सा है! मैं भी एक खूब अच्छी जगह पर बहाल होते होते रह गया। नसीबकी बात है दादा! नसीबकी बात है।

गोव०—तूने ठीक कहा भाई! जान पड़ता है, पहले जन्म में हम दोनों सगे भाई थे। सो चाहे जो हो दादा, तू तो अब डेरे

पर जाकर मजेसे नींदके खर्राटे लेगा, और मुझे इस पूस-माघके कठिन जाड़ेमें खड़े खड़े कांपना पड़ेगा। कुछ गांजा-वांजा है दादा ?--हो तो जरा दम मार कर तबियत ठीक करलूं।

पहरे०—गाँजेका नाम भी नहीं है भाई ! (गोवर्द्धनकी बगलमें एक पोटली देखकर) तेरी इस पोटली में क्या है दादा ?

गोव०—कुछ नहीं है भाई, एक फटा पुराना कम्बल है। देहकी तो रक्षा करनी ही होगी, नहीं तो कल सवेरे तक मैं जमकर बरफ़ न हो जाऊंगा !

पहरे०—तो भाई, अब मैं लम्बा पड़ता हूं ?

गोव०—अच्छा दादा।

(पहरेदारका प्रस्थान)

गोव०—अब बस दीदीके आने भरकी देर है—फटा कम्बल बाहर निकाल रखखूं।

(पोटलीसे पहरेदारकी पोशाक बाहर निकालता है)

(सरजूका प्रवेश)

गोव०—यह लो दीदी मुग़ल पहरेदारकी पोशाक लो।

सरजू--यह पोशाक कहाँसे लाये भाई ?

गोव०—हूं-हूं—दीदी, तुम्हारी कृपासे मैं अब वह भोलानाथ नहीं रहा। बहनोई साहबको सिपाही बनाकर निकालनेके लिये मुगल-छावनीके एक सिपाहीको कतलकर आया हूं। अब जाओ दीदी, जल्दीसे अपना काम पूरा कर डालो। मैं भी अपने दल में जाकर मिल जाऊं। (प्रस्थान)

(पर्दा बदलता है ।)

स्थान—कैदखानेका भीतरी हिस्सा।

(रंगनाथ अकेला है ।)

रंग०—बुरे कामका यही फल होता है ! महापातकका यही प्रायश्चित है । बड़ी भारी ऊंची आशा की थी ; राज्य पानेकी लालसामें बहुत ही पागल हो रहा था, उसका फल यह हुआ ! अब बन्धनकी यातना और नहीं सही जाती । इससे तो प्राण-दण्ड ही अच्छा ! लेकिन उसमें भी अब अधिक विलम्ब नहीं है ! रातका तीसरा पहर बीत गया है, अब सबेरे ही सबके सामने मुसलमानके हाथसे मरना होगा । ओह कैसा अपमान है ! प्रबलप्रतापशाली महाराष्ट्र वंशमें जन्म लेकर आज कैसे घृणित ढंगसे मेरे जीवनका अन्त होगा ! आज राजारामके नाम और गुणगानसे सब दिशायें गूँज रही हैं, आज देवता और पिता समझकर भारतके देश-देशान्तरोंसे लाखों आदमी राजारामकी पूजा करने, उनके पैरोंमें प्रणाम करने आ रहे हैं । उन्हीं महापुरुष के विरुद्ध शस्त्र धारण करनेसे आज मेरी दशा कैसी बदल गई है ! अब मैं अपना यह कलङ्क धो नहीं सकूंगा, अपने किये पापका प्रायश्चित करके वीर मण्डलीके आदरका पात्र बन नहीं सकूंगा। रात समाप्त हो आई है उसीके साथ जीवनकी सब आशाएं भी सदाके लिये मिट जांयेगी ।

(सरजूका प्रवेश)



रंग०—कौन ? सरजू ? तुम आई हो—मुझे बचाओगी ?

सरजू—हाँ बचाऊंगी। (हथकड़ी-बेड़ी खोलना) यह लो, पहरेदारकी पोशाक पहनकर निकल जाओ !

(पोशाक देती है)

रंग०—सरजू ! तुम मेरी कौन हो ? इस बन्धुशून्य संसार-सागरमें तुम मेरी कौन हो—जो डूबनेसे बचाने आई हो ?

सरजू—कोई नहीं हूँ; एक साधारण दासी मात्र हूं।

रंग०—मुझे बचानेके लिये अपनेको क्यों आफतमें डालती हो सरजू ?

सरजू—आप मुसलमानके बन्दी हैं, इसलिए।

रंग०—तो फिर तुम क्यों मुसलमानकी बन्दी हुई हो ?

सरजू—अब नहीं रहूंगी।

रंग०—जाओगी कैसे ?

सरजू—रातको रंगमहलके बाहर जानेका मुझे हुक्म है।

रंग०—कहाँ जाओगी सरजू ?

सरजू—सो तो मैं भी नहीं जानती। आप देर न कीजिए। जल्द जाइए।

रंग०—(जाते समय) तुम देवी हो या मानवी ?

(रंगनाथका प्रस्थान)

सरजू—जाओ प्रभु ! मैं भी फिर सन्यासिनी हो गई।—हे जगत्पिता जगदीश्वर ! तुम्हारी दयाकी हद नहीं है। तुम दया न करते तो कौन इस विपत्तिके सागरसे उन्हें उबार सकता !

(प्रस्थान)

दृश्य चौथा।

स्थान—जहानाराके महलका एक हिस्सा।

(औरंगजेब अकेला)

औरं०—(स्वगत) यही मेरी सल्तनत है! यही मेरा रंग-महल है! यही मेरी बादशाही है! काबुल कांधार, गोलकुण्डा, बीजापुर, बंगाल बरार, महाराष्ट्र, दक्खिन—लगभग सारा हिन्दुस्थान मैंने जीत लिया है। मेरी आँखोंके इशारेसे पृथ्वी कांप उठती है, मेरे इशारेपर हिन्दुस्थानके भाग्यका चक्र पल-पल भर पर चक्कर खाता है, और मैं रंगमहलका कुछ इन्तिज़ाम नहीं कर सकता! मेरा रंगमहल मेरा नहीं है! उसमें मेरा कुछ वस नहीं है—मेरी कुछ ताकत नहीं है! रंगमहल मेरी सल्तनत और मेरी हुकूमतके बाहर है! यही मेरी सल्तनत चलानेकी लियाकत है! इधर अपने रंगमहलको काबूमें रखनेकी ताकत मुझमें नहीं है—उधर मैं दुनियाके ऊपर अपनी हुकूमत चलानेमें लगा हूं! यह मेरी ढिठाईके सिवा और कुछ नहीं है! जहानाराका मन-माना ढंग और चलन अब मुझसे सहा नहीं जाता, उसके पापकी नदी लबालब भर आई है। इस पापिनका विनाश क्या न होगा?—या खुदा जहानाराका नाम क्या अपने इस सुन्दर संसार से न उठा दोगे?

(जहाँनाराका प्रवेश)

जहाँ०—जहाँपनाहने क्या मुझे तलब किया है?

औरंग०— हाँ।

जहाँ०—ऐसे असमयमें तो दिल्लीके बादशाहने कभी मुझे नहीं याद किया !

औरंग०—ज़रूरत होने पर याद करना ही पड़ता है। जहानारा, तुम मेरी कौन हो ?

जहां०—मैं आलमगीर बादशाहकी बहन–दिल्लीके मालिककी बाँदी हूं।

औरंग०—धन-दौलत, पद-मर्यादा, प्रभुत्व-सन्मान किसी चीज़की क्या तुम्हारे लिये मैंने कमी रक्खी है ?

जहाँ०—नहीं बादशाह सलामत; आपके अनुग्रहसे मैं रंग-महल भर पर हुकूमत रखती हूं।

औरंग०—इसीसे शायद तुम उस अनुग्रहका इस तरह सदु-व्यवहार कर रही हो।

जहाँ०—बाँदीका क्या कुसूर है, बादशाह सलामत !

औरंग०—कुसूर समझमें नहीं आता ! रंगमहलमें क्या किसीका दबाव नहीं है ? दिल्लीके बादशाहके जनाने महलके कलङ्ककी घोषणा दूर तक क्यों हो रही है ? हिन्दुस्तान भरमें मेरे मुंह दिखलानेकी जगह क्यों नहीं है ?

जहा०—यह सवाल रंगमहलकी और बेगमोंसे कीजिये; इस बारेमें अपनी लड़कियोंसे पूछिये।

औरंग०—तुम कुछ नहीं जानतीं ? कुछ ख़बर नहीं रखतीं ?

जहा०—मेरा ख़बर रखना न रखना एकसां है। शाही रंग

महलकी बेगमें अगर मेरे कहनेपर चलतीं तो दिल्लीके बादशाहके महलसे आज यह जहरीली हवा न निकलती।

औरंग०—तुम्हारा कुछ दोष नहीं है?

जहा०—इस प्रश्नका उत्तर देनेमें अपनी बड़ाई करनी पड़ेगी।

औरंग०—क्या-अपना ऐब छिपानेके लिये सारे महलकी बेगमोंको बदनाम करके उनका अपमान करती हैं? पापिन! धर्मकी तरफ देख कर जवाब दे; सत्यका ख़याल रख कर जवाब दे, खुदा का ध्यान रख कर जवाब दे। झूठ न कहना-तेरा कुछ दोष नहीं है

जहा०—धर्मकी ओर देख कर कहती हूं बादशाह, सत्यका ख़याल रख कर कहती हूं बादशाह, खुदाका नाम लेकर कहती हूं बादशाह, आपका रंगमहल अपने पापसे आप उजड़ जायगा, आपकी सल्तनत बहुत जल्द मिट्टीमें मिल जायगी-रसातलको चली जायगी। जहां इतना अधर्म है वहां कभी मंगल नहीं हो सकता, हो सकता है कि मैं अपराधिनी होऊं, लेकिन बादशाह सलामत एकके पापसे क्या सारा रंगमहल गँदा या कलँकित हो सकता है? एकके अधर्मसे क्या हिन्दुस्थानके बादशाहके मुंहमें कालिमा पुत सकती है? सिर्फ मैं दोषी हूं, और रँगमहलके सब लोग निर्दोष हैं!

औरङ्ग०—अब भी छल-कपटकी बातें करती हैं! पापिन, तू दिल्लीके बादशाहकी सगी बहन है, चन्द्रमा और सूर्यकी भी मजाल नहीं कि तेरा मुंह देखलें। बता, नीच काफ़िर रंगनाथ किसके हुक्मसे तेरे महलमें आता था?

जहा०—मेरे हुक्मसे।

औरंग०—तब भी तू निर्दोष है।

जहा०—वह अपनी स्त्रीके पास आता था।

औरंग०—पापिन, अब भी झूंठ बोले जाती है? अब भी एक पापके ऊपर दूसरा पाप मोल ले रही है? अब भी अधर्मकी राहमें प्रलोभन है? धर्मका नाम तूने एकदम अपने हृदयसे उठा दिया है।

जहा०—धर्मका ख़ौफ़ न दिखाइयेगा जहांपनाह! अगर दुनियामें कोई अधर्मका अवतार है तो वह दिल्लीके बादशाह आलमगीर हैं। अगर अधर्म ही किसीके जीवनका एकमात्र लक्ष्य है तो वह आलमगीर बादशाह हैं। मुग़लसाम्राज्यका अधःपतन तुम्हारे ही अधर्मसे होगा! उदारहृदय महात्मा अकबर बादशाहके कलेजेकी हड्डीकी तरह प्यारे और आदरकी चीज, इस हिन्दुस्तानका यह विशाल साम्राज्य किसकी मूर्खतासे पानीमें बुलबुलेकी तरह, लीन होता जा रहा है—मिटता जा रहा है। यह बात क्या तुम समझ नहीं पाते, बादशाह सलामत?

औरंग०—मेरे अधर्मसे! मेरे अधर्मसे! मुगलोंकी कीर्ति को मिट्टीमें मिलानेवाली, मुगलोंकी गौरव-लक्ष्मीका सत्यानाश करनेवाली पापिन मेरे अधर्मसे?

जहा०—हाँ तुम्हारे अधर्मसे सौ बार कहूंगी, तुम्हारे अधर्मसे, हजार बार कहूंगी तुम्हारे अधर्मसे लाख बार कहूंगी तुम्हारे ही अधर्मसे! आज हिन्दुस्तानके एक सिरेसे दूसरे सिरे तक किसके

अत्याचारसे आकाशभेदी करुण आर्तनाद उठ रहा है? यह किसकी करतूत है? क्या तुम्हारे अत्याचारसे ऐसा नहीं हो रहा है जहाँपनाह? हिन्दुओंके देशको शोभाहीन करके, हिन्दुओंके सब धन-रत्न लूटकर मुग़लसम्राट्‌का खजाना भरा जा रहा है—किसके अत्याचारसे? क्या जहांपनाह, तुम्हारे अत्याचारसे ऐसा नहीं हो रहा है? काबुलसे उड़ीसे तक—हिमालयसे बरार अहमदाबाद तक हिन्दू और मुसलमान एक ही मतलबसे मिलकर जहांगीर-शाहजहांके इस सोनेके साम्राज्यको चूर-चूर और टुकड़े-टुकड़े करने आ रहे हैं—किसके अत्याचारसे ऐसा हो रहा है? जहाँपनाह; क्या तुम्हारा अत्याचार इसका कारण नहीं है? पेड़ोंमें पत्ते जैसे असंख्य होते हैं, नदियोंमें लहरें जैसे असंख्य होती हैं; आकाशमें तारे जैसे असंख्य होते हैं: वैसे ही तुम्हारे पाप भी बेशुमार हैं, तुम्हारा अधर्म भी बेहिसाब है, तुम्हारी बदनामी भी बेहद है।

औरङ्ग०—शैतानी, तुझे अपनी जान का खौफ नहीं है?

जहा०—जानका खौफ! तुम्हारे राज्यमें रहकर कब कौन बेखटके निश्चिन्त होकर सोया है? सवेरे जिसे देखा है, रातको सुना, वह जन्म भरके लिए इस दुनियांसे चल बसा है। तुम्हारे साम्राज्यका मूलमन्त्र अविश्वास है, तुम्हारे जीवनका मूलमन्त्र अधर्म है, तुम्हारे सर्वनाशका मूलमन्त्र संशय है। इन्हीं तीनोंसे तुम्हारा साम्राज्य है, इन्हीं तीनोंसे तुम्हारा अस्तित्व है, और इन्हीं तीनोंसे तुम्हारा विनाश होगा!

औरंग०—पापिन ! मुग़ल सम्राज्यका मिटना असम्भव है। आलमगीर जिस साम्राज्यकी नींव दुनियां भरमें डाले जा रहा है वह साम्राज्य अविनाशी है—अक्षय है।

अहा०—भूल है—भूल है—ग़लत समझ रहे हो बादशाह सलामत। तुम्हारी यह धारणा बिल्कुल भूलसे भरी हुई हैं! लाखों नर नारियोंके खूनकी नदी वहाकर जो साम्राज्य स्थापित किया गया है सैकड़ों आत्मीय सजनोंके कटे सिरोंसे जिस साम्राज्यकी सीढ़ियाँ बनी हैं, बाप, भाई, बहन, भतीजे आदिकी हड्डियोंसे और चमड़ेसे जिस साम्राज्यकी चहारदीवारी उठाई गई है, उसका विनाश देखते देखते तीन ही दिनमें हो जायगा, सूर्यकी किरणें छू जाते ही जैसे कुहासा मिट जाता है, वैसे ही यह साम्राज्य बिला जायगा ! रुधिरके सागरके ऊपर तुम्हारा साम्राज्य उतरा रहा है—अधर्मकी हवाके झोंकोसे वह हिल डुल रहा है। उसी सम्राज्यका इतना घमण्ड कर रहे हो ? आलमगीर एकबार मनमें सोचकर देखो, वह खुदा है ; इस दुनियाँको पैदा करनेवाला भी कोई वस्तु है। तुम मनमानी करनेवाले हो ; मगर वह मनमानी नहीं करते। तुम्हारा साम्राज्य अधर्मका है; उनका साम्राज्य अधर्मका नहीं है। वहाँ धर्मका विचार होता है अधर्म का भी विचार होता है ; पापका विचार होता है पुन्य का भी विचार होता है—वहां तुम्हारा भी विचार होगा। उनके हाथसे किसी तरह न बच सकोगे—किसी तरह नहीं बच सकोगे—किसी तरह नही बच सकोगे—याद रक्खो ! (प्रस्थान)



औरंग०—(स्वगत) यह क्या, यह क्या ! पापिन यह क्या कह गई ? मेरी आँखोंके आगे यह दिखा गई सिरसे पैर तक मुझे कँपाकर कैसी धर्मकी रोशनी जला गई ! धर्म-धर्म ! कहाँ है धर्म ? कहाँ है सत्य ! आलमगीर बादशाह बड़ा ही दीन और अभागा है। आओ धर्म ; इस अभागेके पास एक बार आओ। एकबार तुम्हें गलेसे लगाऊंगा ! कभी तुमको नहीं देखा अब तुम्हें देखूंगा। कभी तुमको नहीं पहचाना—अब तुमको पहचानूंगा ! अब तुम्हें नहीं भूला रहूंगा; अब अधर्मकी सलाहमें पड़कर अपनेको धोखा नहीं दूंगा क्या धर्म है, कहां धर्म है ?

(प्रस्थान)

दृश्य पाँचवाँ।



स्थान—भीमा नदीका किनारा।

(वासन्ती लेटी है पास सरजू बैठी है।)

सरजू—कष्ट हो रहा है क्या बेटी ?

वासन्ती—नहीं मा कष्ट नहीं है।

सरजू—तो फिर आँखोंसे आँसू क्यों बह रहे हैं ?

वासन्ती—क्या जाने क्यों, शायद तुम्हारे लिए, शायद तुम को छोड़कर जानेके खयालसे।

सरजू—तुम रात दिन मधुसूदन, हरिको पुकारती हो।

पहले परिचयके समय मैंने समझा था कि तुम्हारे हृदयमें माया-मोह या ममता नहीं है, किसी तरहका कोई बन्धन नहीं है। फिर तुम मेरे लिए दुःख क्यों करती हो बेटी? तुम्हारी आँखोंमें आँसू क्यों देख पड़ते हैं?

वासन्ती—नहीं मा, दुःख कुछ नहीं है। ये आँसू आनन्दके आँसू हैं। मेरे मधुसूदन दयामय हैं उनका नाम दीनानाथ है तुम भी मा, दयामयी हो उनकी दया तुम्हारे हृदय में भरी हुई है। मधुसूदन जैसे मेरे अपने हैं; वैसे ही तुम भी मा मेरी अपनी हो।

सरजू—पगली, इतना उपाय करके भी मैं तुझे बचा नहीं सकी। यह मेरे मनका दुःख मरनेपर भी नहीं मिटेगा!

वासन्ती—क्षोभ क्या है? दुःख क्या है? दीनानाथको पुकारो, वे ही सब दुःख दूर करेंगे। आः—कैसी ठंडी हवा है मा...मा...देख रही हो...वह—वह, कोई मुझे पुकार रहा है! कैसा सुन्दर रूप है, कैसा मनोहर रूप है! आँखें शीतल हो गईं हृदय भर गया! तुम ही दीनानाथ हो? कहाँ...यह रूप तो मैंने इतने दिन देखा नहीं प्रभु! आज क्या बेटीकी याद आई दीनानाथ? आः...देखूं, जी भरकर देखूं...(सो जाती है)

सरजू—आहा! शायद जरा नींद आगई है। बालिका कैसी पवित्र है, कैसी पुण्यमयी है! सचमुच इसने दीनानाथको पहचान पाया था। आहा...बचीका ऐसा अन्त हुआ! मगर

आश्चर्य ही इसमें क्या है, स्वर्गका कुसुम नरककी भूमिमें कैसे रह सकता है! सोती है—जरा पङ्खा डुला दूं।

(रंगनायका प्रवेश)

रंग०—कहां जाऊं! आज सात दिनसे वन वन मारा मारा फिरा हूं। यह तो निर्जन स्थान नहीं है। नदीके किनारे झोपड़ी देख पड़ रही है। तो क्या मैं फिर बस्तीमें आ गया? अगर कोई देख ले? न कुछ खाया है, न पिया है, इस दीन-वेशसे घूमता फिरता हूं—अब तो नहीं हो सकता! अब और चलनेकी भी शक्ति नहीं है। खूब राज्य पाया! नारायण—ना यह नाम न लूंगा, यह नाम लेनेका अधिकार मुझको नहीं है। फिर—फिर क्या करूं? कहां जाकर प्राणोंकी रक्षा करूं कौन मुझे आश्रय देगा?

वासन्ती—(नींदकी हालतमें) डर क्या है? मैं आश्रय दूंगी।

रंग०—कौन-कौन...कौन है आश्रय देनेको कहकर किसने मुझे तसल्ली दी? बोलो...बोलो...चुप क्यों हो?

सरजू—(वासन्तीसे) क्यों बेटी...क्या कह रही हो कहां नहीं तो—वह तो अभी सो रही है। (पासही रंगनाथको देखकर) वह कौन है?

रंग०—तुम कौन हो? कौन सरजू! तुम यहां हो, तुम ही बोल रही थीं!

सरजू—नहीं जो बोल रही थी, वह यह लेटी हुई है। देखो, पहचान सकते हो?

रंग०—(देखकर) कौन वासन्ती ! बेटी, बेटी, तेरी यह दशा हो गई !

सरजू—हां— बालिका मौतकी राहमें जानेके लिए तैयार है। जरा सो गई है—पुकारो नहीं।

वासन्ती—कौन, पिता...आश्रय देनेवाले अब अच्छी तरह साफ देख नहीं पाती, सब धुंधला देख पड़ता है ! अपने पैरोंकी रज मुझे मस्तकमें लगाने दीजिये। आप बहुत ठीक समय पर आगये। और ज़रा देर होनेसे फिर भेंट न होती। पिताजी, मैं जाती हूं-आशीर्वाद दीजिये कि मैं दीनानाथके चरणोंमें स्थान पाऊं।

रंग०—बेटी...बेटी ..वासन्ती ! तू जाती है ! मैंने ही तेरी यह दशा की है, मैंने ही तुझे मार डाला।

वासन्ती—नहीं पिताजी, आपने क्यों ? आपने तो कुछ नहीं किया। आपने जो किया अच्छा ही किया। आप हीके कारण मैं दीनानाथको एकाग्रमनसे पुकार सकी हूं। वह दीनानाथ मुझे गोदमें लेनेके लिये आ रहे हैं। पिताजी, मैं चली, माता, जाती हूं। मधुसूदन तुम दोनोंका मङ्गल करें। आः··· नींद आ रही है बड़ी साधकी नींद है, यह नींद अब नहीं उचटेगी...अब नहीं जागूंगी ! दीनानाथ.........

(मृत्यु हो जाती है।

सरजू—बस सब समाप्त हो गया !

रंग०—हो गया...हो गया...सब समाप्त हो गया बेटी,

बेटी...मैंने ही तुझे मार डाला। क्या होगा...क्या होगा बेटी, तूने बड़ा कष्ट पाया! मैंने ही तुझे बड़ा कष्ट दिया...मैंनेही तुझे आश्रय हीन कर दिया। मैंने ही तुझे, तेरा सर्वानाश होना जानकर भी, दुष्ट कासिमके हाथमें दे दिया, इसीसे आज तेरी यह दशा हुई! क्या किया...मैंने क्या किया! बालिकाकी हत्या कर डाली, बेटीकी हत्या कर डाली, स्त्रीकी हत्या कर डाली। ओः...होः · होः...

(मूर्च्छित होकर गिर पड़ना)

सरजू—किस तरह हत्याकी हैं, सो जानते हो? कैसा कष्ट पाकर बालिका मरी है, यह जानते हो? दुष्ट कासिमके हाथसे अपनी रक्षा करनेके लिये बालिका भीमा नदीके जलमें फाँद पड़ी-बेचारीकी हड्डी- पसली चूर-चूर हो गई! हाय—पल पल भर पर मृत्युसे बढ़ कर दारुण कष्ट सहकर भी बालिकाने एक बार भी तुम्हें दोष नहीं दिया। दीनानाथको ही पुकारती और कहती रही कि पिताका कल्याण हो। बासन्तीको मारकर तुमने केवल बालिकाकी हत्या नहीं की—माताकी हत्या की है!

रंग—ठीक कहा-ठीक कहा, इस स्वर्णकमलको मैंने ही आगमें जलाया है! सरजू, तुम इस बालिकाकी कौन हो?

सरजू—कोई भी नहीं।

रंग०—तुम कौन हो? तुम निराश्रयको आश्रय देती हो; मुझ ऐसे नरपिशाचको मौतके मुंहसे बचाती हो, तुम कौन हो?

सरजू—मैं कौन हूँ' सुनोगे! कहूंगी आज वह बात



कहूंगी। इस अनन्त सन्नाटेमें-इस एकान्त स्थानमें...इस अनन्त सागरकी ओर बहकर जानेवाली भीमा नदीके किनारेपर...इस अनन्तकी गोदमें लेटी हुई बालिकाके सामने...आज वही बात कहूंगी, जिसे अब तक कई बार कहनेका इरादा करके भी नहीं कहा। अब छिपा रखना मेरी शक्तिके बाहर है। प्रभू! मैं तुम्हारी पत्नी हूं, मैं तुम्हारी सहधर्मिणी हूं, मैं तुम्हारी जीवन-मरणकी साथिन हूं।

रंग०—यह क्या! यह क्या कह रही हो सरजू—

सरजू—प्रभु, कर्नाटकके जागीरदारकी याद है? मैं उन्हीं की बेटी लक्ष्मीबाई हूं। मैंने बनावटी वेशमें अपना नाम सरजू रख लिया है। तुमने मुझे व्याहके बादही त्याग दिया था। जीवनमें फिर कभी मेरा मुंह नहीं देखा। तुम मुझे भूल गये, मगर मैं तुमको नहीं भूल सकी। तुम्हें देखनेके लिये फकीरनीके वेषमें तुम्हारे आसपास घूमती फिरती रही। शत्रुकी कन्या समझकर तुमने मुझे छोड़ दिया था। अगर तुम पहचान लोगे तो शायद तुम्हें देख भी न पाऊं, इसी भयसे कभी मैंने तुमको अपना परिचय नहीं दिया। तुमने मुझे देख कर भी नहीं देखा। तुमने नहीं देखा, मगर मैंने तुम्हें जी भर कर देखा। मुगलोंने मेरे पिताकी हत्या कर डाली। पिताकी मौतका बदला लेनेके लिये मैं दिल्ली गई। उसके बादका सब हाल तो जानते ही हो!

रङ्ग०—जानता हूं—जानता हूं—सब जानता हूं। मैं महा-पातकी हूं—मेरे सिरपर अब भी वज्रपात क्यों नहीं होता? काला

नाग इस समय भी क्यों नहीं मुझे डस लेता? लक्ष्मी—लक्ष्मी—

सरजू—अपनेको संभालिये, स्वामी!

रंग०—राज्यकी लालसामें उन्मत्त होकर मैंने क्या नहीं किया? उच्च आशाके फेरमें पड़कर मान, मर्यादा, महत्व, मनुष्यत्व, सर्वस्वको मैंने तिलंजलि देदी। तुम्हारी ऐसी पत्नी—जिसकी जोड़ नहीं है...जिसकी कभी तुलना नहीं हो सकती—जो पत्नीजगत्में आदर्श मानी जानेके योग्य हैं—जैसी पत्नी जगत्में हरएक मनुष्य चाहेगा...उसी सब गुणोंसे परिपूर्ण भुवनमोहिनी पत्नीके मुखकी ओर मैंने एक बार भी फिरकर नहीं देखा—उसके बारेमें एक बार भी नहीं सोचा! जो बालिका बे-मा-बापकी थी, निराश्रय थी, जगत्की त्यागी हुई थी, जिस अनाथ बालिकाने निरुपाय होकर मेरा सहारा पकड़ा था, एक मुट्ठी अन्नके लिये, एक बूंद करुणाके लिये जो मेरे द्वारपर आकर खड़ी हुई थी; उसे निठुराईके साथ, सारी ममता भुलाकर, मैंने एक पिशाचके हाथमें सौंप दिया! अपने घरके मङ्गलकलशको मैंने आपही लात मार कर चूर-चूर कर डाला! ओह! कैसी जलन है—कैसी जलन है, जलनेके समुद्रमें मैं सिरसे पैरतक डूबा हुआ हूं। नरककी आग मेरी हड्डियों तकको जला रही है! मैं अपनेको संभालूंगा? मैं स्थिर होऊंगा? लक्ष्मी, मैं तुमसे एक बात कहता हूं—अधिकार न होने पर भी कहता हूं—तुम मुझे भूल-जाओ; मुझ ऐसे नरपिशाचकी पापमयी स्मृतिको अपने पवित्र हृदयसे सदाके लिए उखाड़कर फेंक दो, निकाल डालो!—

सरजू—यह आप क्या कह रहे हैं स्वामी ?

रङ्ग०—मैं तुम्हारा अयोग्य स्वामी हूं ? यह अधिकार भी मुझे नहीं है कि तुम्हें पत्नी कहकर ग्रहण कर सकूं ! हाय, मेरा बीता हुआ जीवन अगर जगत्से मिटाया जा सकता, तो जान पड़ता है मैं तुम्हारी पवित्र पुण्यछायामें बैठकर इस ज्वाला-मय जीवनको शीतल कर सकता—शान्ति पा सकता।

सरजू—ना प्रभु, तुम इस समय विपत्तिसे छुटकारा पा गये हो। इस मरी हुई बालिकाका मुख शायद तुम्हारे भावी जीवनको नये आदर्शपर गढ़ेगा। अब मैं यहाँ नहीं रहूंगी। अभी तक मुझे बहुत काम करना बाक़ी है। वह पिताका मुक्त आत्मा कहता है—बदला ! बदला !! तुम्हारे लिए इस ध्वनिको भूल गई थी। क्योंकि तुम मेरे इष्टदेवसे बढ़कर, मेरे पितासे बढ़कर श्रेष्ठ हो। तुम मेरे स्वामी हो, मेरे सर्वस्व हो, मेरा इहलोक परलोक हो। तुम विपत्तिसे छूट गये, अब मैं यहां नहीं रहूंगी।

(प्रस्थान)

रंग०--लक्ष्मी, लक्ष्मी—जाना नहीं, मुझे छोड़कर जाना नहीं ! कहाँ—कहां—गई, आः नहीं देख पड़ती ! लक्ष्मी—लक्ष्मी, अन्धकारमें गायब हो गई ! कहाँ खोजूं ? भगवान अब और किस लिए ? अब जीवन रखनेका फल क्या है ? किस आशासे जीऊंगा ? पापका बोझ लादकर, इस असह्य स्मृतिकी चोट सहकर, पल पल भर पर मृत्युकी यन्त्रणा भोगनेकी अपेक्षा भीमाके जलमें जान दे देना ही अच्छा है।

(भीमाके जलमें फांदना चाहता है; एकाएक राजारामका प्रवेश और रंगनाथको पकड़ लेना)

राजा०—मरोगे क्यों ? आत्महत्या महापाप है—यह इरादा छोड़ दो।

रंग०—तुम कौन हो ? भगवान, मुझे क्या मरने न दोगे ? क्यों रोकते हो; छोड़ दो—मैं अपनी ज्वाला शान्त करूंगा।

राजा०—वृथा क्यों मरोगे सुनो—मैंने तुम्हें पहचान लिया है। तुम रंगनाथ हो।

रंग०—आप कौन हैं ?

राजा०—मेरा नाम राजाराम है।

रंग—ऐं—सच ? यह स्वप्न है या पहली ?

राजा०-कुछ भी नहीं सच—है।

रंग०—मैंने अपनी जातिके ऊपर जो अत्याचार किया है, उसकी कल्पना शायद दानव भी नहीं कर सकता। आप क्या इसीसे अपने हाथसे मारकर उसका बदला लेंगे ?

राजा०-छीः ऐसी बात मत कहो! हजारों लपटें फैलाकर पश्चातापकी आग तुम्हारे हृदयमें जल उठी है। अब कोई तुम पर क्रोध कर सकता है ?

रंग०-ओः—बिच्छू काट रहे हैं—बिच्छू काट रहे हैं! जिस पृथ्वी पर आपके ऐसे महात्मा देवताका निवास है; जिस पृथ्वी पर वासन्तीसी देवबाला का पुण्यमन्दिर है, जिस पृथ्वी पर लक्ष्मी ऐसी शक्ति रूपिणी पत्नी मुझ जैसे नरपशु स्वामीको



स्वर्गका प्रकाश दिखानेके लिए मौजूद है...उस पृथ्वीपर भी मेरे लिए जगह नहीं है। पूज्यपाद, मुझे क्षमा कीजिये, मैं जीकर इस संसारमें नहीं रह सकूंगा। वह देखिये...मेरे कुकर्म्मका ज्वालामय चित्र देखिए! वह बालिका धर्म्मप्राण और सदा पुण्यमयी रही है। राज्यलाभके लोभ और आशासे मैंने बच्चीको बिना किसी संकोचके मुसलमानके हाथमें सौंप दिया था। उसके हाथसे बचनेके लिए मेरी बेटीने जान दे दी है। मैं यह स्मृति हृदयमें रखकर जी नहीं सकूंगा। देव, मुझे छोड़ दीजिये।

राजा०—रंगनाथ, तुम्हें ऐसा कहना नहीं सोहता। तुम अपनेको इस बालिकाको मौतका कारण समझकर पछता रहे हो, लेकिन इसी बालिकाके अनुरूप हमाराराष्ट्रदेश दिन-दिन रक्तके आंसू बहा रहा है। माताके—जननीजन्मभूमिके—उन आँसुओंको पोंछे बिना ही मर जाओगे? कायरोंकी मौत मरोगे? आओ माताके काममें सब शत्रुता भूलकर आज हम दोनों परम मित्र बन जायँ। आओ—गलेसे लग जाओ।

(दोनों गले लग जाते हैं)

पर्दा गिरता है।



चौथा अंक.

पहला दृश्य ।

—:०:—

स्थान—सितारेका क़िला ।

(रंगनाथ अकेले)

रंग-(स्वगत) यह राजाराम कौन हैं? यह क्या हमीं लोगों की तरह मनुष्य हैं! किस तरह कहूं कि वह देवता नहीं हैं? जो मुझ ऐसे कुलांगारको क्षमा कर सकते हैं, मुझ ऐसे कापुरुषके कर्मोंसे अपने सर्वनाशका होना जानकर भी जिन्होंने मुझे ऐसे गौरवका पद दिया है—इस महायुद्धके सञ्चालनका भार सौंपा है—वह क्या मेरे ही समान मनुष्य हैं? ना ना, महाराष्ट्रपति राजाराम मनुष्य नहीं, देवता हैं। मैं! उन देवताकी करुणा पानेके भी योग्य हूं। मेरे चारों ओर अन्धेरा है! मेघके ऊपर मेघने आकर आकाश-पटलको ढक लिया है, अतीतसमयकी एक घटनाके बाद अन्य घटनाने आकर हृदय-पटलको छा लिया है। इस अन्धकारमें प्रकाश नहीं है, आशा नहीं है, है केवल पछतावे की तीव्र ज्वाला! ज्वाला—ज्वाला!! महाराष्ट्रदेशके घरमें आज अकाशभेदी हाहाकार सुन पड़ता है, पिता पुत्रहीन हैं, माता ममताके आधार सन्तानसे रहित है, सती सच्ची स्त्री स्वामीके

वियोगसे व्याकुल हैं ; घर घरमें हरएक हृदयमें आज चिन्ताकी आग जल रही है ! यह आग किसने जलाई है ? मैंने । पास, दूर, वनमें, मैदानमें, पहाड़में, कन्दरामें, मेरी बदनामीकी—मेरे अधर्मकी घोषणा सुन पड़ेगी । प्रवाह, तरङ्ग, मेघ, बिजली, आँधी, तूफानके झोंके मेरी अकीर्तिका बखान करेंगे । भूलोक, स्वर्गलोक, जल, स्थल, आकाश, वायु आदि अनन्त कालतक इस अभागेकी पाप स्मृतिको धारण करेंगे ! जीनेसे अब मेरा क्या प्रयोजन है ? मेरी एक मात्र प्रायश्चित्त मौत है ! वह मौत कहाँ है ? इस विश्वव्यापी घोर अन्धकारमें भीषण रक्तकी बढ़ियाकी तरह प्रबल रुधिरके उच्छ्वासमें, क्यों यह ज्वालामय निन्दित शरीर, क्षुद्र तटकी मिट्टीकी तरह चूरचूर नहीं हो जाता !

(मरहठे सिपाहीके वेषमें गोवर्द्धनका प्रवेश)

गोव०—काफिर चाचा, कहो, क्या खबर है ?

रंग०—तुम कौन हो ?

गोव०—यह क्या बहनोई साहब, अच्छी तरह आंखें फाड़-कर देखो तो, मैं बड़ी औरतको भगा देनेवाला फकीर हूं या नहीं ?

रंग—(आश्चर्यसे) ऐं—यह क्या !

गोव०—क्यों चाचा, घबराते क्यों हो ? सोचकर देखो न, सेनापतिके घर जब मैं गया था, तब तुमसे भेंट हुई थी कि नहीं तुमने भी चोला बदल डाला है । मैंने भी चोला बदल डाल है ; लेकिन इससे पहचाननेमें गड़बड़ी क्यों होना चाहिये ?

रङ्ग०—अबकी दफ़ा पहचान लिया, तुम शत्रु हो—शत्रुके चर हो।

गोव०—चर नहीं हूं चाचा, तुम्हें चराने आया हूं।'

रंग०—तुम मेरा सर्वनाश करने आये हो, तुम कासिमके आदमी हो; कोई है!

गोव०—हाय हाय क्यों करते हो, वहनोईजी! तुम्हारे मनुष्य पहचान सकनेमें अब भी बहुत देर है।

रंग०—ख़ूब पहचान लिया है, अच्छी तरह पहचान लिया है; (तलवार दिखाकर) तेरा सिर काट लूंगा, अविश्वासी शैतान!

गोव०—(हँसकर;) चुप चुप तलवार म्यानके भीतर करलो मालिक! भीतर करलो—यह ईस्पातका टुकड़ा दिखाकर अब मुझे घायल नहीं कर पाओगे।

रंग०—ना ना, तुम्हें नहीं छोड़ूंगा; तुम निश्चय ही चर हो।

गोव०—यह क्यों न कहोगे चाचाजी लेकिन यह चर साला न होता तो राजा साहब आज तुम यहां इस तरह जीते जागते नहीं दिखाई पड़ते! वहनोई दादा, अगर कैदख़ानेमें सिपाहीका वेश बनाकर मैं न पहुंचता, तो यहां आज तुम्हें चराने कौन लाता? अब क्या कुछ भ्रम मालूम पड़ रहा है?

रंग०—(विस्मित भावसे) हां भ्रम मालूम पड़ रहा है तुम अपना परिचय दो।

गोव०—परिचय देने लायक मेरा कुछ नहीं है दादा! बंगाल का अफ़ीमी मैं हूं। पेट पालनेके लोभ और नशेकी झोंकसे दुनियां घूमता-घूमता इस देशमें आ गया। नसीब में ज़ोर था, दादा इसीसे राहमें सात राज्यका धन मिल गया। वह धन

तुम्हारी स्त्री और मेरी बहन है। वह धन मेरे लिए गंगा-यमुना सरस्वती है, वह धन मेरे लिए गर्मीके दिनोंमें शीतल निकुञ्जके समान शान्ति दायक है। उसीकी कृपासे मैंने नशा खाना छोड़ दिया। तलवार पकड़ी, और तुम्हें बहनोई जाना। उसीके लिये मुश्किल आसान बना, उसीके लिये कपटवेश धारण किया। दादा मैंने दीदीके सभी काम किये, केवल उस लड़कीको नहीं बचा सका एक तरहसे बचा भी लिया। सेनापतिके हाथसे न मरकर वह भीमा नदीमें फाँदनेके कारण मर गई। यह अच्छा ही हुआ बहनोई दादा! अब ज़रा अपनी तलवार निकालो तो देखूं?

रंग०—(गोवर्द्धनको गले लगाकर) भाई मुझे क्षमा करो! मैं कुछ भी नहीं समझ सका था, कुछ भी नहीं पहचान सका था। समझूं क्या, पहचानूं क्या? आँखें अन्धी थीं, मन भ्रममें पड़ा हुआ था, अंग विकल थे। ग़लत देखा, ग़लत समझा ग़लत पहचाना। उसी भूल और ग़लतीके फेरमें पड़कर आज मौतको खोजता फिरता हूँ। मृत्यु कहां है, भाई मृत्यु कहां है? कहाँ है वह लोक जहां जाने पर यह सारा भ्रम और भूल जाती रहती है, वहां की राह दिखा दो भाई!

गोव०—उसी राहमें तो आये हो, दादा! मेरी दीदी दशभुजा दुर्गा है, वह दसों हाथोंसे तुम्हारी रक्षाकर रही है। तुम्हें भय क्या है? ईस्पातकी तलवार तुम्हारे लिये स्वर्गकी सीढ़ी है। इसे ठीक चलाना—ठीक राहपर चले जाओगे। अब मैं जाता हूं, दादा! खबर देने आया था—मुग़ल लोग इस सितारे-

गढ़ पर हमला करने आ रहे हैं। वहां महाराष्ट्रपति राजाराम है यहां तुम, ठीक तौरसे सावधान रहो। जाता हूं।

(प्रस्थान)

दृश्य दूसरा।

स्थान—जिंजीगढ़का भीतरी हिस्सा।

(कुछ मरहठे सरदारोंके साथ राजाराम गढ़की बाहर-दीवारीपर टहल रहे हैं।)

राजा०—(दूर पर एक ओर देखते देखते) प्यारे जिंजीगढ़, जान पड़ता है, अब तेरी रक्षा नहीं कर सकूंगा। पाँच वर्षसे अधिक हुए तबसे मुगलोंकी तोपें तुझे तोड़नेमें लगी हैं। तू सैकड़ों जगहसे फट गया है, फिर भी तूने अपने प्यारे मरहठोंको अपनी गोदसे नहीं उतारा। कौन कहता है कि तूं कठिन पत्थरका बना हुआ है? वह मुगलोंकी तोपें गरज रही हैं और मेरी बचपनकी याद, जिनमें विजड़ित हैं वह तेरे खंभेसे, हर कोठेसे हर बुर्जसे और हर द्वारसे उन तोपोंका शब्द टकरा रहा है। यह केवल तोपोंका गरजनेका शब्द तो नहीं है; इसी शब्दमें आज तेरे मर्मभेदी हाहाकारकी ध्वनि सुन रहा हूं!—सरदारो, सामन्तो! मेरा इरादा सुनो; सुन कर विस्मित न होना—विचलित न होना। आज मैं अपने पूज्य पिता—पितामहकी पावन पदरजसे पवित्र इस गढ़को अपने हाथसे मुगलोंको सौंप दूँगा।

(खूनसे तर सन्ताजीका प्रवेश)

संताजी—भागिये, महाराज, भागिये; अब रत्तीभर देर न कीजिएगा। ज़ाफ़र खां और कासिम खांकी मातहतीमें बहुत सी बादशाही सेना एक साथ दोनों ओरसे गढ़पर हमला कर रही हैं। पश्चिमी फाटक टूटनेके लगभग हैं। जो सब बेचारे ग्रामवासी गढ़में आश्रयकी आशासे आये थे, उनके ठंढे खूनसे शत्रुओंने धरतीको रंग दिया है। महाराज, अब यहां नहीं ठहरिये—भागिये।

राजा०—इस दुर्दिनमें, इस घोर संकटके समय, आत्मीय-स्वजन आदि किसीके मुंहकी ओर न देखकर, सबके वीर शरीरको मसानमें डालकर, तुम सन्ताजी, महाराष्ट्रपतिको भागनेका उपदेश देने आये हो ?

संताजी—उपदेश देने नहीं आया हूं प्रभु, पैर पकड़ कर अनुरोध करने आया हूं।

राजा०—तुमने ग़लत समझा है संताजी, ग़लत समझा है। क्या तुम यह नहीं जानते कि किसके लिये मुगलोंका यह युद्धका उन्माद है ? बड़े भाई गये; बड़े भाईका पुत्र कैद है; मैं बचा हूं। मेरे मरने हीसे सब समाप्त हो जायगा, पुण्यश्लोकमहात्मा-शिवाजीका वंश निर्मूल हो जायगा, और वह होते ही मुगल बादशाह सुखकी नींद सो सकेगा! अभी अपने मनकी बात मैंने तुम लोगोंसे खोलकर कह दी है। निश्चय जानो मेरा इरादा अटल है; आज मैं अपनेको पकड़ा दूंगा। संताजी,

तुमसे तो छिपा नहीं हैं, पितृदेवके पदांकका अनुसरण करके कितने परिश्रमसे तुम्हारी मातहतीमें यह थोड़ी सी किसानोंकी फौज तैयार की गई है। किसके लिये इन भेड़ोंकी वलि देना चाहते हो? महाराष्ट्र देश इस समय भी गहरी नींदमें सो रहा है, जिस नैतिक वलसे तुम लोग वलवान हो, तुम लोगोंके मरने पर, सोये हुए मरहठोंके हृदयमें कौन उस सर्गीय नैतिक शक्तिका संचार करेगा? जाओ भैया, अपने राजाकी आज्ञासे अपने सेनापतिकी आज्ञासे—यह सफेद झण्डा गढ़की दीवार पर खड़ा कर दो—

[सहसा लक्ष्मीबाईका प्रवेश और राजारामके हाथसे सफेद झण्डा लेकर दूर फेंक देना]

लक्ष्मी–लो यह मैंने सफेद झण्डा उड़ा दिया, अब तुम अपने को पकड़ा दो।

राजा०–तुम कौन हो मैया? जिस दुर्भेद्य मुग़लोंके घेरेके भीतरसे होकर एक मक्खी यहां नहीं आ सकती उसे भेदकर तुम कैसे यहां आई हो मैया? किस शक्तिके वलसे मैया तुमने असाध्य-साधन कर डाला? किस तरह तुम इस विपत्तिपूर्ण दुर्गम स्थानमें चली आईं?

लक्ष्मी—मैं तुम्हारी लड़की हूं। पहले यह कहो अपनेको पकड़ा दोगे?

राजा०—मैया, लड़कीके वशमें तो बाप होता ही है।

लक्ष्मी–लड़कीके हाथमें नहीं पिताजी, अपने देशके निवा-



सियोंके हाथमें—अपने प्यारे मरहठोंके हाथमें अपनेको सौंप दो।

राजा०—छलनामयी मैया, तुम कौन हो? तुम्हारी इस पहेलीका अर्थ तो मेरी समझमें कुछ नहीं आता।

लक्ष्मी—प्रातःस्मरणीय महात्मा शिवाजीके वंशधर, महाराष्ट्रके महाप्राण नेता तुम्हारी दृष्टि कबसे ऐसी हीन हो गई है? एकबार आँख फैलाकर देखो, जहाँ तक दृष्टि जाती है वहांतक एक टक देखो—महाराष्ट्रदेश सो रहा है या जाग रहा है!

राजा०—संताजी! सरदारो!! देखो, देखो—जी भरकर देखो हृदयकी आशा पूरी करके देखो—कैसा अपूर्व दृश्य है! दीवालीकी दीपमालिकाकी तरह शिखरपर शिखर सब प्रकाश पुञ्जसे जगमगा रहा है! जय माता अष्टभुजा बहुत दिनके बाद तुमने हर पर्वतपरकी हर चोटी पर मरहठोंके स्वधर्मानुरागकी पवित्र आग जलाई है! मायामयी, यह स्वप्न है, या सत्य है?

लक्ष्मी—अब भी संदेह है? लो सुनो महाराज, उन लोगोंने तुमको आंखोंसे कभी नहीं देखा है सही, लेकिन मुग़लोंके साथ पांच साल तक तुम्हारे इस भिड़नेको सारा दक्षिण महादेश आग्रहके साथ देखता आ रहा है। मरहठोंके हृदयमें तुम्हारा राज्य स्थापित हो गया है। यही कहती थी कि आज तुमको अपने आपको पकड़ा देना होगा। मुग़लोंके निकट नहीं, यवनोंके द्वारपर नहीं, अपने देशवासियोंके निकट, अपने प्राणोंसे प्यारे मरहठोंके हाथमें अपनेको सौंप देना होगा!

राजा०—इन लोगोंको छोड़कर?

लक्ष्मी--ये कौन हैं पिता? ये क्या वे नहीं हैं? आज अगर तुम उनकी ममता न छोड़ सके, तो कल क्या हरएक शिखरपर यह पवित्र प्रकाश प्रज्वलित होगा? तुम्हारा ही मुँह देखकर सारा महाराष्ट्रदेश जग उठा है। तुम अगर आज भागनेका साधारण कलङ्क अपने सिरपर लेनेमें संकुचित होओगे, क्षण भरके मोहमें पड़कर सदाके मङ्गलको पैरोंसे ठेल दोगे, तो फिर छत्रपतिका वंशधर कहकर अपना परिचय न देना। मरहठोंको निश्चिन्त जानकर भी आज अगर तुम यहां ठहरे रहोगे, तो केवल तुम्हारे साथ-साथ सारे महाराष्ट्रदेशको आजसे फिर सदाके लिये गहरी नींदमें सो जाना पड़ेगा।

राजा०—बोलो बेटी, क्या करना होगा!

लक्ष्मी—अब अधिक समय नहीं है पिता! वह सुनो, मुग़-लोंका कोलाहल क्रमशः अत्यन्त निकट सुनाई पड़ रहा है। यह लो, तुम्हारे लिए भिक्षुककी पोशाक ले आई हूं। राजाका वेश उतार डालो, फ़कीर बनकर यह निशाचरपक्षी जिधर जा रहा है, उसी ओर जाओ—

(बिजलीकी तरह तेज़ीसे लक्ष्मीबाईका प्रस्थान)

राजा०—सन्ताजी, यह अपनी पोशाक उतार रहा हूं, अगर माता भैरवी सुदिन दिखायेंगी तो ये सब राजचिन्ह इस शरीर पर धारण करूंगा—नहीं तो बस यही अन्त है!

(फकीरका वेश बनाकर राजारामका प्रस्थान)

सन्ताजी—अन्धकार—चारों ओर अन्धकार है! माता

अष्टभुजा, इस अन्धकारमें प्रकाश दिखाओ—महाराष्ट्रपतिकी रक्षा करो।

(नेपथ्यमें तोपका शब्द होता है)

सन्ताजी—कैसा सर्वनाश है! शत्रु क़िलेके भीतर आगया है! अभीतक महाराज गढ़के बाहर नहीं पहुंचे होंगे! अगर उस पोशाकमें कोई उन्हें पहचान ले!। हे महापुरुषके शिरोभूषण, तुम इस अयोग्य मस्तकके ऊपर स्थान ग्रहण करो। हे महापुरुषकी पोशाक, तुम मेरे शरीरको पवित्र करो।

(सन्ताजी राजारामकी पोशाक पहिनता है)

(कासिमके साथ मुग़लसेनाका प्रवेश)

कासिम—वह—वह महाराष्ट्रका राजा है। दुशमनके ऊपर हमला करो। सब एक साथ हमला करो।

सन्ताजी—आओ, हमला करोगे, आओ मरहठे लोग दुर्बल हाथोंसे तलवार नहीं पकड़ते।

(युद्ध होता है)

कासिम—और फौज बुलाओ!

सन्ताजी—बुलाओ...बुलाओ...एक आदमीको मारनेके लिये हिन्दुस्थान भरकी सारी मुग़ल सेनाको इस जिंजीगढ़में जमा कर लो--कासिम, यही बहादुरी लेकर महाराष्ट्र देशपर चढ़ाई करने आये हो?

कासिम—दुश्मन कहले, जहन्नुम जानेमें अब बहुत देर नहीं है—जो चाहे कह ले।

सन्ताजी—मरनेका भय न दिखाना सेनापति ! युद्धभूमिका गौरवमण्डित वीर शैय्यापर मैं सुखसे सोऊंगा। लेकिन तेरा क्या होगा, जानता है ? विधाताके विश्वनाशी वज्रपातसे तेरी हड्डी पसली चूरचूर हो जायगी।

कासिम—बहुत अच्छा राजा, बहुत मीठी बातें तू कह रहा है। (युद्धका नगाड़ा बजाकर) पकड़ो काफिर को, पकड़ो, बांध लो (दो चार सिपाहियोंको पीछे रहते देखकर) हटो नहीं और सेना कहां है ?

सन्ताजी—अब और सेना बुलानेकी जरूरत नहीं है। लो मैं यह तलवार डाले देता हूं, अब और हत्याका क्या काम है ? महाराष्ट्रपति अपनी इच्छासे अपनेको गिरफ्तार कराये देता है।

कासिम—मार डालो—मार डालो—सब मिलकर एक साथ वार करो।

(सबका प्रहार करना और सन्ताजीका घायल होकर गिरना)

सन्ताजी—अभागे महाराष्ट्रदेश ! मैं तेरा कुछ काम न कर सका—

कासिम—दुश्मन, तू सामना नहीं कर सका। मैंने अपना काम पूरा कर लिया; तेरे सिरके बदले आज मैं बादशाहकी बेहद मेहर्बानी हासिल करूंगा।

(सन्ताजीका सिर काटकर लेकर सबका प्रस्थान)



दृश्य तीसरा ।

स्थान—गाँवकी राह ।

(मरहठे सिपाही लोग ।)

सब—भागो, भागो, वे मुग़ल आ रहे हैं ।

१ सिपाही—फिर पीछेकी ओर देखता है ?

२ सिपाही—मेरा भांजा पीछे रह गया है—उसीको देख रहा हूं ।

१ सिपाही -तो फिर खड़े होकर मर । अरे अपने प्राण बचा ! भाँजेकी खबर बहन लेगी ।

(लक्ष्मीका प्रवेश और राह रोककर खड़ी हो जाना)

लक्ष्मी—कहाँ जाते हो ?

सब—यह कौन है ?

१ सिपाही—छोड़ो छोड़ो, राह छोड़ो, जाने दो । तुम शत्रु पक्षकी जासूस हो क्या ?

लक्ष्मी—ना, मैं तुम्हारे घरकी लड़की हूं—कहाँ भागे जाते हो ?

२ सिपाही—सो...सो...हम नहीं जानते...

लक्ष्मी—क्यों भागते हो ?

२ सिपाही—प्राणोंके भयसे, और क्यों ? मुग़लोंने बड़ी मार काट मचा दी है...महाराष्ट्र देश आज मसान हो गया ।

लक्ष्मी—महाराष्ट्रदेश मसान हो गया, और तुम भागे जा रहे हो ? शर्म नहीं आती !

२ सिपाही—तो फिर हम क्या करें ? सिर्फ खड़े रहकर अपना सिर कटवाएं ?

लक्ष्मी—भागकर प्राण बचानेका निश्चय किया है ? युद्ध-भूमिसे भागकर फिर नहीं मरोगे...क्यों ?

२ सिपाही—तो, तो तुम—आप क्या कहती हैं ?

लक्ष्मी—कुछ नहीं ! मैं राह छोड़े देती हूं—भागो। मगर सावधान, कभी मरना नहीं ! वनमें भागकर बाघके हाथों न मरना। कल मैं नदीमें नहाने गई थी, जाकर देखा...एक बहुत ही सुन्दर लड़का स्नान कर रहा था उसे मगर खींच ले गया। उस लड़केकी मा रसोई बनाये बैठी हुई थी, लड़का फिर लौट कर रोटी खाने नहीं आया, खबरदार! उस तरह मगरके हाथों न मरना। एक दिन रातके समय आँधीपानीमें मैं एक मैदानके उस पार जा रही थी—मेरे सामने ही एक मनुष्यके सिर पर बिजली गिर पड़ी। तुमलोग खूब सिर बचाकर चलना। जब कड़-कड़ाहटके साथ आकाशसे बिजली गिरे, तब तुरन्त जान लेकर भागना, तो फिर वज्रपातसे मौत न होगी। अपने घरके बीच, स्त्रीकी गोदमें सिर रखकर, रोगकी यन्त्रणासे छटपटाते जब मौतसे घिर जाओगे—उलटी सांस चलने लगेगी, तब देखूंगी कि तुम कैसे मृत्युज्वरके ग्राससे अपने प्राण बचा सकोगे ! जाओ राह छोड़ दी—अब भागते क्यों नहीं ?



१ सिपाही—यह तो भैया सिरपर आई हुई मौत है, जान सुनकर मरना है।

लक्ष्मी—वही तो कहती हूं...जाओ—भागो; लेकिन इस दुखिया स्त्रीकी एक बात याद रखो—ऐसी जगह भागकर जाना जहां साक्षात मौत न हो।

२ सिपाही—इन सब शास्त्र की बातों को रहने दो—जब तक जियें तभी तक अच्छा।

लक्ष्मी—यह जीना कितने दिन होगा, यह क्या अच्छी तरह हिसाब करके ठीक कर लिया है? तुम लोग किसान आदमी हो, हो सकता है कि खेतमें जोतनेके समय या काटने आदि के समय एक छोटासा कांटा पैरमें लग जाय। उसीके घावसे रोग बढ़कर सारा अंगभी सड़ जा सकता है। उस तरह खाट पर पड़े पड़े भोगनेकी अपेक्षा तलवारका वार सहकर युद्धमें मरना अच्छा नहीं है? किसी आलेसे या बरतनके भीतरसे एक काला नाग निकलकर देखते ही देखते डस सकता है तो क्या तोपके गोलेके आगे छाती बढ़ा देनेकी अपेक्षा वह मौत क्या अधिक पसन्द है?

१ सिपाही—क्या करें भैया? लगातार सात दिन-रात तक युद्ध करनेसे हमारे हाथ-पैर शिथिल और सुन्न हो गये हैं। हाथोंमें अब सत नहीं रहा।

लक्ष्मी—मगर पैरोंमें तो खूब ताकत देख पड़ती है। जो दौड़ तुम पीछेकी ओर लगाना चाहते हो, वही दौड़ अगर सामने

की ओर लगाते, तो केवल उतनेहीसे शत्रुकी बहुत सी सेनाको धरती पर लिटा देते और कहते हो कि आत्मामें बल नहीं है? भागकर कहीं जाओगे तो क्या वहाँ पड़े पड़े अपना पेट पालोगे?

२ सिपाही—पड़े रहनेसे पेट कैसे भरेगा मैया? मेहनत-मज़दूरी करनीही पड़ेगी—सो चाहे हल चलावें—चाहे हथौड़ा उठावें और चाहे पेड़ काटें।

लक्ष्मी—फिर क्यों यह कहते हो कि हाथोंमें बल नहीं है ऐसा नहीं है; महाराष्ट्र माताके वीर पुत्रो, ऐसा नहीं है। तुम्हारे हाथोंमें यथेष्ट बल है। जिन पैरोंसे तुम भागनेका काम लेना चाहते हो उन्हीं पैरोंकी चापसे अब भी धरती कांप उठेगी! केवल तुम्हारे हृदयमें बल नहीं है। मुगल जादू जानते हैं, तुम पर जादूकर दिया है। इसीसे तुमने मनका बल गवाँ दिया है। और जूजूके डरसे भागे जा रहे हो! जितना तुम भागोगे उतना ही जूजू तुम्हारा पीछा करेगा। लेकिन जूजूके सामने एक दफा छाती फुलाकर खड़े हो जानेपर उसी समय जूजूका पता नहीं लगेगा! छी—मरनेके डरसे भागते हो?

२ सिपाही—ना मैया; अब नहीं भागेंगे। तुम जहाँ हमें ले चलोगी वहीं हम चलेंगे।

(एक मरहठे सैनिकका प्रवेश)

सैनिक—सर्वनाश हो गया—सर्वनाश हो गया—अब कहाँ जाते हो भाई—महाराष्ट्रपति नहीं है!

सब—यह क्या—यह क्या!

सैनिक—उनका कटा हुआ सिर इस समय दुराचारी कासिमके हाथमें है!

लक्ष्मी—कटा हुआ सिर! हाः सब चेष्टा विफल हो गई!

सब—ऐं—महाराज मर गये? और हम मरनेके डरसे भाग रहे हैं!

लक्ष्मी—महापुरुष राष्ट्रपति इस समय दक्खिनी लोगोंकी धर्मशक्तिके गर्वसे फूले हुए पर्वत थे! उन्हींके हृदयको भेदनेवाली प्रबल प्रेमकी आगने आज अभिनव भूकम्पकी सूचना की है। इससे अगर उनका नश्वर शरीर नष्ट हो जाय तो उससे हानि क्या है? महापुरुषकी मौत कभी निष्फल नहीं होती उस मौतका नाम महाजीवनीकी सूचना है। उठो, जागो, उनकी मौतका बदला लो; अब मत डरो।

सैनिक—आहा, मैया तुम कौन हो? तुमने ठीक कहा मैया। भाइयो, बदला लो, आग जलाओ; ऐसी आग जलाओ कि उसमें दिल्लीका तख्तताऊस जलकर राख हो जाय।

१ सिपाही—ना, अब डर नहीं है। बताओ मैया हमें कहां जाना होगा?

लक्ष्मी—तुम सब सितारागढ़ जाओ।

सैनिक—तुम मैया क्या हमारे साथ नहीं जाओगी?

लक्ष्मी—नहीं मैया, मेरा यहाँका काम पूरा होगया है।

सैनिक—तो मैया क्या अब फिर तुम्हारे दर्शन नहीं मिलेंगे?

लक्ष्मी—कह नहीं सकती।

सैनिक—अब कहाँ जाओगी मैया ?

लक्ष्मी—स्वामीके पास। मेरी सोहागरात नहीं हुई, उसके लिए जाऊंगी।

(लक्ष्मीका प्रस्थान)

सैनिक—अब यहाँ क्यों खड़े हो भाइयो ? चलो; सिताराके गढ़में चलें। मैयाके उपदेशको कोई न टालो।

सब—जय माता भैरवीकी।

(सबका प्रस्थान)

दृश्य चौथा।

——:o:——

स्थान—मैदान।

(राजाराम अकेले)

राजा०—भाग आया, चोरकी तरह, कायरकी तरह, छद्मवेशसे भाग आया! राजवेश त्यागकर फकीरकी गुदड़ीसे देह-ढकी! वह रमणी कौन थी? उसकी नयनोंमें कैसी मोहनीशक्ति थी—जीभमें कैसा इन्द्रजाल था! छी-छी-छी, यह मैंने क्या किया पुत्र, परिवार; शिष्य, सेवक, सबको, शत्रु के समान छोड़कर प्राणभयसे भाग खड़ा हुआ! एक स्त्री जिसको पहले कभी देखा न था, उसी अपरिचित, योगिनीवेशधारिणी स्त्रीके कहनेपर मन्त्रमुग्धकी तरह चल खड़ा हुआ!-ना, ना, प्राणोंके भयसे नहीं भागा। उस स्त्रीका कहना ही ठीक था...मेरे प्राण देनेका समय

अभी नहीं आया। लोग मुझे डरपोक कहेंगे, कहें, इतिहासमें कायरकी उपाधि मिलेगी मिले—कुछ हानि नहीं जगत् हँसेगा, हँसे। महाराष्ट्र देशका उद्धार करना मेरे इस-जीवनका एक मात्र व्रत है। उस व्रतको पूर्ण करनेके लिये अभी मुझे अपने जीवन की रक्षा करनी होगी। मैं कौन चीज हूं मेरा मान-अपमान ही क्या है? माता भैरवी अपना मान-अपमान लो, भैया अपनी नेकनामी-बदनामी लो, अपनी वासना-विसर्जन लो। मेरी वीरताका गौरव, कायरपनकी लज्जा, सब कुछ काम तुम लेलो भैया केवल अपने व्रतका उद्यापन करने दो। यह लोक क्या चीज है, मैं महाराष्ट्रदेशके लिए अपना परलोकतक देनेको तैय्यार हूं। माता भैरवी; मेरा उद्देश्य देखो, भैया; मेरा काम न देखो। भागे हुए चरणो, चलो—सितारगढ़ में चलो। चलकर मैं अपनी माता की बलि-पूजा संग्रह करूं। ओः—कितने समय तक अभी यह खूनखराबी चलेगी।

(सन्यासिनीके वेशमें लक्ष्मीका प्रवेश)

लक्ष्मी–क्या फ़क़ीर, तुम अभी तक राहमें ही हो?

राजा०—राहमें तो बहुत समयसे हूं, धर्मशालाको तो बहुत दिनोंसे खोज रहा हूं—पाता नहीं हूं। जान पड़ता है, यह राह तय नहीं हो सकती।

लक्ष्मी—उस दिन सुना, तुम्हारा धर्मशाला खोजनेका कष्ट देखकर सदय हृदय कासिम खांने तुम्हें एकदम देशको भेज दिया।

राजा०—पहेली बुझाना छोड़ दो मैया, तुम्हारी बात कुछ समझमें नहीं आती।

लक्ष्मी—सुना था, कासिमने तुमको मार डाला—उसके हाथोंसे तुम्हारे जीकी सब जलन मिट गई।

राजा०—मैया, यह जीकी जलन मरनेपर भी मिटेगी? तुम मैया योगिनी हो, विश्वप्रेमसे तुम्हारा हृदय भरा हुआ है। यह अपना स्वदेश-प्रेम किस तरह समझाऊं?

लक्ष्मी—सचमुच क्या तुम अपने देशको इतना प्यार करते हो?

राजा०—यह बात किस तरह बताऊं? अभी मैं कह रहा था कि अपने देशके लिये मैं अपने परलोकको भी तिलाञ्जली दे सकता हूं।

लक्ष्मी—अच्छा महाराज, मायामोहके बन्धनको क्या तुम काट सके हो?

राजा०—कहाँ काट सका हूं। इस नश्वर शरीरके भीतर हड्डी-मांसपेशी आदि कुछ नहीं है-सारे शरीरमें स्वदेशकी ममता और स्वदेशवासियोंका मायामोह भरा है। फिर मैं कैसे कहूं कि मायाका बन्धन काट सकता हूं?

लक्ष्मी—यह मायामोह देवमहिमासे मण्डित है। तुम जननी जन्मभूमिकी रक्षामें लगे हुए हो—तुम्हें अपनी बेटीकी भी कुछ खबर है क्या?

राजा०—जगन्माता उसे देखेंगीं।



लक्ष्मी—उन्होंने देख लिया है। तुम्हारी कन्या वेखटके सुरक्षित स्थानमें है। जगदम्बिकाने उसे अपनी गोदमें उठा लिया।

राजा०—इसके क्या माने ?

लक्ष्मी—तुम्हारी कन्या अब इस लोकमें नहीं हैं।

राजा०—जाओ जाओ योगिनी, तुम अनेक रूप रखती हो, अनेक खेल खेलती हो। उस दिन तुमने वीरको कायरोंकी तरह भगा दिया—और आज फिर जन्म भरके लिये उसका हृदय चूर्ण कर देने आई हो ?

लक्ष्मी—हृदय चूर्ण करने नहीं आई हूं राजाराम, तुम्हारे टूटे हुए हृदयमें लोहेका कवच पहनाने आई हूं।

राजा०—इसीसे मर्मव्यथाकी कहानी गढ़कर लाई हो ?

लक्ष्मी—यह कहानी नहीं, सच है। मैं ख़ुद चाहे जो और जैसी होऊं, लेकिन इस समय जो वेश मैंने धारणकर रक्खा है, उसकी मर्यादा मैं कभी नहीं भूली हूं। मैं झूठ कहने नहीं आई हूं।

राजा०—तो फिर तुम मेरी कन्याके मरनेकी बात क्यों कह रही हो ?

लक्ष्मी—केवल कन्या ही नहीं, तुम्हारे पुत्र भी अब इस लोकमें नहीं हैं।

राजा०—उसके बाद—और—कहे जाओ, कहे जाओ!—ना, और क्या कहोगी! जिसकी जिसकी बात कहनी थी सो सब तो कह दिया। बस, तो तुमने यह सब जान बूझकर मुझे यह

फकीरका वेश धारण कराया था—क्यों ? योगिनी, मैं देखता हूं, तुम बहुत कुछ जानती हो, अच्छा, मुझे एक उपाय बता दे सकती हो क्या ?

लक्ष्मी—क्या ?

राजा०—आत्महत्याके पापसे बचकर किस तरह जान दी जा सकती है ?

लक्ष्मी०—हाँ बता सकती हूं, वह बहुत ही सहज उपाय है। सितारेके गढ़में जाओ, यह गुदड़ी दूर फेंक दो, और कवच पहन कर हाथोंमें ढाल तलवार लो। फिर युद्धके मैदानमें शत्रुके सामने आगे बढ़ो। वहाँ यमद्वारके लाखों मार्ग देख पाओगे।

राजा०—अब और किसके लिये युद्ध करने जाऊंगा ?

लक्ष्मी—तो क्या इतने दिनों तक केवल अपने पुत्र और परिवारके लिये ही युद्ध कर रहे थे ? अपने संकीर्ण स्वार्थके लिये, हजारों निर्दोष सती-साध्वी स्त्रियोंके स्वामी-पुत्रोंके पिता-माताओंके पुत्र मरवाकर, उनके रक्तकी नदीसे महाराष्ट्रदेशको पुत्र और परिवारके लिये ही प्लावित कर रखा था ? अभी तो तुम कह रहे थे कि तुम महाराष्ट्रदेशके लिये अपने परलोकको भी बिगाड़ सकते हो-आत्माको भी नरकगामी बना सकते हो ?

राजा०—हाय रे मूढ़ गर्वित मनुष्य, प्रवृत्तिके दास, वासनाके दास, मायाके संशयपाशाके दासानुदास ! मैं स्वदेश प्रेमका गर्व करता हूं !—माता भैरवी, मेरे घमण्डको तुमने खूब चूर्णकर दिया।

लक्ष्मी—जाओ महाराष्ट्रपति, जाओ। केवल भाईकी हत्या का बदला लेनेकी आगमें हृदयको जलाकर तुम कार्यक्षेत्रमें उतरे थे, आज फिर उसी आगमें पुत्र-हत्या, कन्याहत्याका ईंधन पड़ गया है, वह आग और भी भयानक रूपसे प्रचण्ड होकर जल उठे! सुन रक्खो, तुम्हारे पुत्र वीरोंकी मौत नहीं मरने पाये, नर-पिशाच कासिमने उन्हें जीते ही जला दिया हैं!

राजा०—हाय हाय—

लक्ष्मी—इतने कातर क्यों होते हो? तुम्हारे पैर क्यों लड़-खड़ा रहे हैं? खड़े होओ, दृढ़ बनो, वज्रमुष्टिसे तलवार पकड़ो। आग धकधक करके जलने दो—उसे और भी प्रज्वलित करो। उस आगमें उस पापको-अत्याचारको भस्म करो!

राजा०—योगिनी, तू क्या साक्षात् भवानी है?

लक्ष्मी—मैं कौन हूं, यह जान सुनकर क्या करोगे? जो कहती हूं, उसे सुनो। आग फैलाओ! आग फैलाओ!! सबसे सुना है, कि तुम मर चुके हो, शायद अब तक बादशाहने भी सुन लिया होगा। मैंने भी यही सुना था लेकिन मेरा भ्रम दूर हो गया है। तुम अपने पुत्रोंके मरनेकी खबर सुनकर मोहसे व्याकुल हो उठे थे—सुनो और एक मनुष्यके मरनेकी ख़बर सुनो।

राजा०—और कौन—और किसका सर्वनाश हुआ?

लक्ष्मी—सर्वनाश हुआ या नहीं, सोतो नहीं जानती, मगर धर्मके लिये, शक्ति और भक्तिके लिये, तुम्हारे लिये एक महापुरुष का प्रशंसनीय आत्मा इस संसारसे उठ गया है।

राजा०—क्या मेरे लिये ?

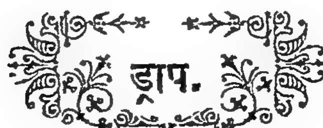
लक्ष्मी—हां, तुम्हारे लिये। तानाजी याद है ? उसी वृद्ध सेनापतिके पुत्र पुरुषश्रेष्ठ महात्मा सन्ताजी अब इस लोकमें नहीं हैं।

राजा०—ऐं, सन्ताजी ! उनकी मौत किस तरह हुई ?

लक्ष्मी—वह तुम्हारी पोशाक पहनकर युद्धके मैदानमें घुस गये मुग़ल सेनासे भिड़ गये। खूनके प्यासे अन्धे कासिमने उन्हें राजाराम समझकर मार डाला।

राजा०—और मैं अपने पुत्रशोकसे शिथिल शोकाकुल होकर तलवार फेंक देनेके लिये तैयार हो गया था ! धिक्कार है, धिक्कार है, हज़ार बार मुझे धिक्कार है ! योगिनी, अपने भाईकी मौतका नहीं, अपने पुत्र-कन्याकी मौतका नहीं, सन्ताजीकी मौतका बदला लूंगा, अवश्य लूंगा ! अब मैं सचमुच असुरविनाशनरूप धारण करूंगा ! योगिनी, जब जब मैं मोहमें पड़कर बल गवाऊं, तब-तब तुम दया करके एक बार दर्शन देना। तुम्हारी इस विनाशिनी फुफकारसे मेरी प्रतिहिंसा-प्रवृत्तिकी आग धकधक करके जल उठेगी ! दर्शन देना, योगिनी, दर्शन देना—

पर्दा गिरता।



पाँचवाँ अंक।

दृश्य पहला।

(स्थान—औरङ्गजेबका मंत्रणाभवन)

औरंगजेब और तानाजी।

औरंगजेब-वृद्ध सेनापति, आप मुग़ल दरबारमें क्यों आये हैं

तानाजी—आप युद्धभूमिसे क्यों फ़िर आये, यही जाननेके लिए आया हूं!

औरंगजेब—अब लड़नेकी इच्छा नहीं है।

तानाजी—सहसा यों बुद्धि बदल जानेका कारण क्या है, जहाँपनाह?

औरंग—यह नहीं जानता, लेकिन मैं आप लोगोंसे सुलह करना चाहता हूं।

तानाजी-जनाब, यह प्रस्ताव कुछ दिन पहले होता तो वृथा दोनों तरफ़के आदमियोंकी इतनी भयानक हत्या न होती।

औरंगजेब-यह जानता हूं तानाजी लेकिन, जो ग़लती कर चुका हूं, वह ग़लती अब फिर न होने दूंगा। मेरे साथ आप लोग सुलह कर लीजिये।

तानाजी-अच्छी बात है वही होगा...आप महाराष्ट्रपतिको निमन्त्रण भेजकर बुलाइए।

(कासिमका प्रवेश)

कासिम—जहाँपनाह, यह लीजिये—बड़ा भारी गैंडा आज घायल हुआ। बड़े कष्टसे देशके दुश्मन जहाँपनाहके दुश्मन उस मरहठे राजाका सिर इस खादिमकी तलवारके वारसे उड़ गया!

(सन्ताजीका कटा हुआ सिर आगे रखता है)

तानाजी—महाराष्ट्रपति राजारामका बाल भी बाँका करना तुम्हारी ताक़तके बाहर है, खाँ साहब! ऐसा पुण्य तुमने नहीं किया कि तुम उनके शरीरपर हाथ भी लगा सको।

औरंग०—तो फिर यह किसका सिर है?

तानाजी—इस दीनके लड़के सन्ताजीका।—आहा सोचा था, बच्चेको जीता पाऊंगा, सो न हो सका, धन्य हो वीर सन्ताजी! धन्य हो! जाओ भैया, विश्वके राजाके मुकुटपर रत्नके रूपसे रहकर तीनों लोकोंको प्रकाशित करो।

औरंग०—यह क्या बात है कासिम?

कासिम—ना जहाँपनाह, इनका कहना झूठ है।

तानाजी—ज़बान सम्भालकर बात करो। तानाजीने झूठ बोलना सीखा ही नहीं। बादशाह पिता और पुत्रके चेहरेको गौरसे देखकर आपही कहिए, उस मुखमें इस भाग्यशाली पिताके मुखकी झलक है या नहीं?

औरंग०—हां, वही तो देख पड़ता है।

तानाजी—बादशाह एक बात कहे जाता हूं। इस निठुर कर्मचारीसे आपका सर्वनाश होगा।



कासिम-ऐसी बात मत कहो। खुदावन्द जानते हैं, मैं भी जानसे उन्हींके काममें, उन्हींकी भलाईमें लगा रहता हूं।

तानाजी—कभी नहीं। मद गर्व डाह जलन क्षमताके क्षणिक प्रलाप निठुरप्रवृत्तिकी उत्तेजना आदिके फेरमें पड़कर तुमने असंख्य बुरे और भयानक काम किये हैं।

कासिम-साबित कर सकते हो?

तानाजी - अवश्य तुम्हारे पापोंकी सूची तैयार करना भी कठिन काम है। तुम्हारे पापोंका बखान करनेसे शरीरमें रोंगटे खड़े हो आते है, ज़बान जैसे ऐंठने लगती है। कासिम किस युद्ध सम्बन्धी प्रयोजनसे तुमने महाराष्ट्रपतिके पुत्रोंकी हत्या की थी? किस महान राजनैतिक उद्देश्यको पूरा करनेके लिये कुल कामिनीका अपमान किया था? सेनापति, मा-बापका स्नेह कैसा होता है, इसका अनुभव क्या कभी तुमने नहीं किया? मा-बापकी महिमा क्या है, यह अगर तुम जानते होते; तो क्या उस सरला ईश्वरभक्तिपरायण रंगनाथकी दासीसे—जिसने तुम्हें पिता कह कर पुकारा था—तुम पिशाचका सा व्यवहार कर सकते? कासिम, तुम क्या नहीं जानते, या तुमने सुना नहीं कि सतीकी गर्म साँसों और आहोंसे महाप्रलय तक हो जाता है। आज नरनारियोंकी गर्म लम्बी साँसोंसे मुग़ल—साम्राज्यकी हड्डी-पसली बिखरी जा रही है। मैं दिव्य दृष्टिसे देख रहा हूं, धनजन-पूर्ण मणि-माणिक्यखचित विचित्र महलोंकी इन इमारतोंमें सियार फुत्ते फिर रहे हैं; और उसी भयानक ध्वंसके मैदानमें खड़े होकर

महाशून्यको हिलाती हुई किसी अशरीर आत्माकी अस्पष्टवाणी केवल मुग़लों हीका नाम ले रही है! मुझे जो कहना था, कह चुका—अब जाता हूं, बादशाह सलामत।

(प्रस्थान)

औरङ्ग०—कासिम, इस समय तुम मेरी सेनाके,सेनापति नहीं; आजसे तुम्हारे साथ क़ैदीका वर्ताव होगा। लेकिन मैं तुम्हारा विचार नहीं करूंगा। राजाराम आ रहे हैं; उनके आने पर तुम्हारा विचार होगा।—पहरेदार, क़ैदीको क़ैदखानेमें लेजा।

(पहरेदारोंका मीरकासिमको लेजाना। औरङ्गजेबका प्रस्थान)

दृश्य दूसरा।

स्थान—सितारागढ़।

राजाराम अकेला।

राजा०—(स्वगत) जीवन भर जारी रहनेवाला युद्ध है। कौन जाने, इस संग्रामका अन्त कहाँपर है? जीवनलाभके लिये यह आग्रहके साथ मृत्युका आह्वान है। कौन जाने कब, कितने दिनोंमें, कितनी शताब्दियोंके अन्तमें, इस मृत्युयज्ञकी पूर्णाहुति होगी! या जीवन तक पहुंचेंगे, या मर जायँगे,—क्या निश्चित है? महाराष्ट्रदेशके घरघरमें आज मृत्युका हाहाकार मचा हुआ है! कहाँ; जीवन-प्रकाशकी क्षीण गर्मी भी तो किसीके हृदयमें जान नहीं पड़ती! चारों ओर हाहाकार ही हाहाकार



है। भारत-भैरवीकी भीमपूजाके आँगनमें पुत्रकी वलि देकर पूजा करने गया था; कर नहीं सका। किन्तु वह पुत्र आज कहाँ है? पृथ्वी भरकी सारी मिट्टीकी राशि मथकर भी क्या उसका पता पा सकूंगा? कभी नहीं। तो फिर क्या निश्चित है? जीवन या मृत्यु? कहाँ है जीवन? जीवन भर जिसके लिये रणमें, वनमें, दुर्गम—दुस्तर स्थानोंमें फाँदता रहा, वह मनुष्यका चिरप्रार्थित अमृतमय जीवन कहाँ है? पर-परिचर्या और गैरकी गुलामीमें उस जीवनके लाभकी आशा कहाँ है? तो फिर आओ मृत्यु; आओ सर्व संहारक महाकालकी चिरसहचरी विभीषिकामयी छाया,—आओ अनन्तकी कोरके अन्धकारमय आवरणकी चिरभीतिमयी प्रेतिनी,—आओ श्मशानशिवासंगिनी नरकंकालमालिनी ध्वंससंगिनी--अपने वर्फसे ठण्डे हाथोंके स्पर्शसे इस जड़ जीवनका ध्वंस कर डालो। इसके रहनेका अब कोई प्रयोजन नहीं है।

(रङ्गनाथका प्रवेश)

रंग०—महाराष्ट्रपति!

राजा०—कौन रंगनाथ!—आज पुत्र, परिवार, आत्मीयस्वजन पुत्रोंसे अधिक प्रिय अनुचरण कालयुद्धमें कहाँ हैं? किन्तु तब भी तो इस जीवन-व्रतके उद्यापनकी कोई आशा नहीं है। बच्चे हो.केवल तुम और मैं!

रंग०—हाँ देव, मैं!

राजा०—क्या चाहते हो रंगनाथ?

रंग०—मुगल युद्धके लिये तैयार हैं। इस युद्धकी सरदारीका काम मैं अपने हाथमें लेना चाहता हूं। अनुमतिकी प्रार्थना है—मंजूरीकी प्रार्थना है। विदा होने आया हूं।

राजा०—विदाई रंगनाथ! माताकी पूजाके लिये अपनी इच्छासे पुत्रको विदाई नहीं दे सकता, विधाताने अनिच्छा रहते भी वह कामना पूरी कर दी। अपनी इच्छासे तुम्हें भेजूंगा? नहीं रंगनाथ, अनिच्छापूर्वक तुमको अनुमति देता हूं! जाओ, आशीर्वाद देता हूं, तुम्हारी तलवार शत्रुशोणितसे रंग जाय; विजयलक्ष्मी तुम्हारे आगे आगे चले; प्रतिष्ठा तुम्हारे हृदयमें लोहेके कवचका काम करे। जाओ वीर, देशवासियोंकी शुभ-असीसमें तुम्हारे मस्तक पर शत धाराओंसे बरसे।

रंग०--स्वदेशभक्त, महाराष्ट्र कुलदीपक, तुम्हारा जन्म भरकी साधनासे प्राप्त स्वार्थत्याग शत्रुओंके मारनेके समय मेरा मूलमन्त्र हो। तुम्हारे पवित्रपुण्यकी किरणे मुझे मार्ग दिखलावें। तुम्हारी कीर्ति मेरे दुर्बल हृदयमें असुरोंका ऐसा बल लावे। तुम्हारा आशीर्वाद सहस्रधारा होकर मेरे मस्तक पर बरसे। चरणोंकी रज दीजिये; मैं विदा होता हूं!

राजा०—चलो वीर, सामने भयानक परीक्षाकी जगह है। हज़ारों मुग़ल मरहठोंका संहार करनेके लिये नङ्गी तलवारें लिये खड़े हैं। शस्त्रोंके द्वारा एक दूसरेकी अभ्यर्थना करता है! कोई नहीं है केवल तुम हो; चलो, आगे बढ़ो; यही अन्त है-या जीवन प्राप्त करेंगे, वा मर जायेंगे! जाओ रंगनाथ यह युद्धका डंका

मृत्युके देशमें तुमको बुला रहा है!

(मरहठोंकी सेनाका प्रवेश)

१ सैनिक—सेनापति, प्रणाम! मुग़लोंके सरदारने भैरवी मन्दिरपर आक्रमण करनेके लिए सेना भेजी है।

रंग०—सच?

१ सैनिक—हाँ सच?

रंग०—जय मैया भैरवीकी! शक्तिमयी, आज तुम्हारी शक्ति-लीलाका अभिनय देखूंगा। पाषाणी, तुम सचमुच पाषाणी हो या प्रमाणमयी हो, यह आज प्रत्यक्ष करूंगा! विश्वनाशिनी तुम सचमुच विश्वनाशिनी हो या भाषाकी प्रहेलिकामयी झंकार-मात्र हो, आज इसका परिचय लूंगा!

(वेगसे प्रस्थान)

सब—जय मैया भैरवी की!

राजन०-महाराष्ट्र देशके वीर पुत्रो! मुगल लोग माताके मन्दिर पर आक्रमण करने आरहे हैं! उस मन्दिरकी रक्षा करना ही धर्म रक्षा है। उस धर्मरक्षासे जातीय जीवनकी रक्षा होगी। उस जातीय जीवनकी रक्षाका उपाय केवल मृत्यु ही है।

तानाजी--कौन कहता है?

राजा०—तानाजी मुग़ल लोग माताके मन्दिरपर आक्रमण करनेको तैयार हैं।

तानाजी—उनकी मजाल नहीं है।

राजा—कौन कहता है?

तानाजी—मैं कहता हूं वत्स! हताश न होना। मैं वृद्ध हूं। संसारके तीव्र कोलाहलसे दूर आपड़ा हूं। बहुत देशोंमें घूमकर बहुत शास्त्रोंको पढ़कर, मैंने बहुतसे तथ्योंका संग्रह किया है। मेरी बात सुनो, बाहुबलको त्यागकर मानसिक बलको दृढ़ करो देश देशमें यह शिक्षा फैलाओ कि दयासे बढ़कर धर्म नहीं है, परोपकारसे बढ़कर व्रत नहीं है, आत्मत्यागसे बढ़कर श्रेष्ठकर्म्म नहीं है, सहानुभूतिसे बढ़कर मनुष्यत्व नहीं है। जिस रातमें जाकर ज्ञानोन्मत्त शंकराचार्य, प्रेमोन्मत्त चैतन्य स्वामी, धर्मोन्मत्त बुद्धदेव सब भारतवासियोंके हृदयराज्य पर अधिकार किये हुए हैं तुम भी उन्हीं महापुरुषोंके दिखाये महामार्ग पर चलो! तुमको देखकर महाराष्ट्रवासी लोग धर्म्मबलसे बलवान हों! तुममें हार्दिक धर्म्मभाव होनेके कारण ही मुग़ल माताके मन्दिरके सामने भी नहीं जासकेंगे। आओ महाराष्ट्रपति, साथ आओ! जय माता भैरवीको!

सब—जय माता भैरवीकी!

(सबका प्रस्थान)

दृश्य तीसरा।

स्थान—भीमा नदीका किनारा।

(रंगनाथ घायल पड़े हैं)

रंग०—प्रायश्चित्त है प्रायश्चित्त है! इस प्रायश्चित्तमें कितना सुख है—कितनी शन्ति है। जन्म भर पापकी राहमें चला हूं।

वासन्तीने कैसी शिक्षा दी! लक्ष्मीने कैसी शिक्षा दी! और हे महाराष्ट्रराज, तुम्हारी महिमा मण्डित क्षमाने कैसी तीव्र शिक्षा दी! आज जीवनके व्रतका उद्यापन है। वासन्ती वैकुण्ठको प्रकाशित किये हुए हैं! लक्ष्मी—मेरी त्यागी हुई, उपेक्षित, पद-दलित लक्ष्मी—कौन जाने कहां हैं! और मेरे पिताके तुल्य राजा-राम अन्तकालमें तुम्हारी पवित्रचरणरज इस अभागेको मस्तकमें लगानेके लिए दो! मेरे कर्मोंका अन्त है, मेरे जीवनका अन्त है—केवल तुम्हारा अन्तिम आशीर्वाद अवशिष्ट है।

(राजा रामका प्रवेश)

राजा०—यह लो वत्स, पुत्रसे बढ़कर प्रिय, समरविजयी वीर, तुम्हें हृदयसे लगानेके लिए मेरे दोनों हाथ बड़े आग्रहके साथ फैले हुए तुमको खोज रहे हैं!

रङ्ग०-महाराष्ट्रपति, कहिये-क्या मेरे पापोंका प्रायश्चित हो गया? मेरे ही दोषसे—आज महाराष्ट्रदेश मसान बना हुआ है! इस पापका क्या कोई प्रायश्चित है!

राजा०—जो निर्भय हृदय तुम्हारी तरह मुक्तकण्ठ होकर अपने दोषको स्वीकार करता है, वह महापुरुष है! दुर्बल मनुष्य तुम्हारे उच्चआदर्श और उदाहरणको आगे रखकर अपने दोष दूर करनेका यत्न करें। यही मेरी ईश्वरसे प्रार्थना है। जिस महालोककी महायात्रा तुम कर रहे हो, उन महालोकनाथके पवित्र चरणोंकी छायामें कर्मदग्ध जीवनकी तीव्र जलन बुझाओ! जाओ, वीर, सब मायामोहके बंधन काटकर मायासे परे लोकको

जाओ। तुम्हारे लिये मैं शोक नहीं करूंगा। आँसुओ, आधी राहमें रुक जाओ!—वीर माता अष्टभुजाकी जय!

रङ्ग०—मै—या—अष्ट—भु—जा—

(मृत्यु हो जाती है

[फूलोंकी माला पहने लक्ष्मीका प्रवेश]

लक्ष्मी-कहां हो तुम मेरे चिर वांच्छित, मेरे आराधनीयदेव! मेरी सब साधनाओंका मूलमन्त्र कहां हो तुम स्वामी, प्रभु—रक्त प्रवाहसे जमीन तर है, चारों ओर लाशें पड़ी हैं। कहां हो तुम एक बार बोलो, एक बार उच्च कण्ठसे बोलो—कहां हो तुम!

राजा०-कौन योगिनी! इस महान मसानमें तुम हो! बोलो मैया बोलो प्रहेलिकामयी! किसकी खोजमें शोकाकुल उच्चस्वर से आकाशको विदीर्णकर रही हो, बताओ?

लक्ष्मी—और किसकी? अपने इष्ट देवकी, अपनी सब कामनाओंके सारांशकी, सब आशाओंकी आशाकी, सब प्रीतियों आधार हृदयदेवताकी खोजमें आई हूं!...वाह वाह, यह है...यह यह...हैं पहले हीसे सेज बिछाली? तो फिर मुझे क्यों नहीं पुकार लिया! नाथ? अब भी क्या दासी इन चरणोंकी अपराधिनी है लो, मुझे साथ लो? मृत्युके कठिन मार्गमें तुम्हारी सेवा कौन करेगा दासीको साथ लेलो।

राजा०—मैया मैया, बताओ तुम कौन हो?

लक्ष्मी—पिता, मैं कर्नाटक के जागीदारकी बेटी···बड़ी ही अभागिन और जन्म भरसे पतिके प्रेमकी कंगालिन हूं।

राजा०—बेटी...बेटी, आ...आ मेरे घर नहीं है, घर मसान हो गया है आ बेटी...अपने मसान हो गये घरमें तुझे ले जाकर महाकालीकी स्थापना करूंगा ?

लक्ष्मी—ना पिता, अब अपने इरादेसे पलट नहीं सकती। क्यों पलटूंगी जीवन भरमें कभी स्वामीका आदर और प्यार मैंने नहीं पाया, स्वामीके निकट कभी इस हृदयकी जलन मिटानेका अवसर नहीं मिला, कभी स्वामीके चरणोंकी सेवाका अधिकार नहीं पाया मेरा जीवन उपेक्षासे गठित है, मेरा हृदय उपेक्षाकी तीव्र आगमें जलता रहा है। मैं एक बूंद स्वामीकी करुणा पानेके लिये उन्मादिनीके वेशसे राह राह घूमती फिरी हूं! देश देशमें परछाहींकी तरह उनके पीछे गई हूं! भ्रममें पड़े और राहसे भटके हुए स्वामीकी भलाईके लिये बांदी बन मुग़लानियोंकी सेवाकी है। आज वही मेरे आराध्यदेव स्वामी मृत्यु-शय्यामें पड़े हुए है! इन चरणोंके पास स्थान देनेके लिये मुझे पुकार रहे है···अब तो नहीं पलट सकती! आज मेरा स्वामीसे मिलनेका दिन है...अब नहीं पलट सकती यह देखो, आज मैं इस शुभमिलनके दिनमें लाल कपड़े पहने हूं...अब नही पलट सकती!

(गोवर्द्धनका प्रवेश)

गोव०—दीदी दीदी, यह देखो मैं भी कैसे रङ्गीन कपड़े पहन आया हूं! मुझे छोड़कर न जाओ ?

लक्ष्मी०—गोवर्द्धन भैया, आनन्द मनाओ...आनन्द मनाओ

जी भरकर आनन्द मनाओ, मैं अपने स्वामीके घर जा रही हूं अब भाईके स्नेहकी जञ्जीरमें मेरी गतिको मत बांधो, वह देखो—मेरे स्वामी मुझे बुला रहे हैं। अब मैं ठहर नहीं सकती।...आती हूं...आती हूं ठहरो...ठहरो (मृत्यु होजाती है)

गोव०—दीदी चली गई! साथ नहीं लिया? दो ज़रा अपने चरणोंकी रज दो...बङ्गाली...जीवनको सार्थक कर लूं! धन्य है तू गोवर्द्धन! धन्य है अफ़ीमी भत खै वे बंगाली...आज तेरा जन्म सार्थक हुआ। जीवन सफल हुआ जाओ दीदी जाओ, जाओ मैया जाओ अब तुम मेरी दीदी नहीं हो...अब तुम मेरी माता भी नहीं हो—तुम मेरी जगन्माता हो, तुम मेरी काली, तारा, महाविद्या, षोड़शी, भुवनेश्वरी सब कुछ हो सदाके लिए मैं आज तुम्हारे चरणोंमें प्रणाम करता हूं।

(लक्ष्मीके चरणोंमें गोवर्द्धनका प्रणाम करना)

दृश्य चौथा।

—:o:—

स्थान—बादशाही महल।

(औरंगजेब और जहानारा)

औरंग०—कौन है?

जहा०—जहांपनाह?

औरंग०—सब खिड़कियां खोल दो।

जहा०—हकीमने मना किया है, बादशाह सलामत। हुक्म हो तो हकीमको बुला भेजूं।

औरंग०--ना, हकीमको बुलानेकी जरूरत नहीं है। मैंने कभी किसीका कहना नहीं सुना, यद्यपि मेरा वह मन आज बदल गया है-,तो भी हकीमको बुलानेकी जरूरत नहीं है। दरवाजे और खिड़कियां खोल दो।

जहा०--(द्वार आदि खोलकर जाते समय स्वगत) मेरा वही सगा भाई औरंगजेब आज जगदीश्वरकी वन्दनाकर रहा है। ईश्वर! उसे शान्ति दो।

औरंग०--आः आः ईश्वरकी कृपा कैसी मनोहर है! दमभर में सब कष्ट—सब—जलन भुला दी! जहानारा-बहन–

जहा०--बादशाह सलामत?

औरंग--इस आकाशकी तरफ आंखें उठाकर देखो, देखपाती हो? चन्द्रमाकी किरणोंसे उज्ज्वल आकाश असीम है, मगर एक सिरेसे दूसरे सिरे तक चमकीली चांदनीसे जगमगा रहा है। उस जगमगाहटमें प्रकाशमें ओछापन नहीं है,-अपूर्णता नहीं है। कहां कितनी दूरपर कितने ब्रह्माण्डोंके उस पार यह उज्ज्वल प्रकाश पिण्ड है, लेकिन किरणें अपने अनन्त प्रवाहसे सुशोभित मेघराशि के ऊपर–सब जगह-सारे विश्व-संसारको व्याप्त किये हुए हैं।

जहा०—जहांपनाह!

औरंग—डर नहीं है! रोगकी बढ़ती हुई वेदनासे व्याकुल होकर प्रलाप नहीं कर रहा हूं! मनमें बड़ा कष्ट है, जहानारा,

जन्म भर भ्रममें पड़ा रहा, जान पड़ता है, आज वह जन्मभर का भ्रम दूर हो गया है, लेकिन बहुत देरमें दूर हुआ जहानारा--

जहा०—भाईसाहब !

और'ग० -जानती हो, लोग मुझे क्या कहते हैं ? लोग कहते हैं—और'गजेब घमण्डी है ; और'गजेब पाखण्डी है, और'गजेब अत्याचारी है, और'गजेब निठुर है, औरग'जेब विश्वास शून्य है ! सचमुच मैं घमण्डी हूं, मैं पाखण्डी हूं, मैं निठुर हूं, मैं विश्वास शून्य हूं, लेकिन क्यों—यह जानती हो ? बचपनसे ही यह धारणा थी, कि इस्लाम धर्मही श्रेष्ठ धर्म है। उसी धर्मकी स्थापना और प्रचारके लिये मैंने अपने जीवन और अपने कामोंमें कठोरतासे काम लिया है। मेरी बचपनसे होने वाली शिक्षाने मुझको नरहत्या करनेके लिये उत्तेजित किया--शिक्षाके दोषसे भेदनीतिका सहारा लेकर मैंने इस विशाल साम्राज्यको टुकड़े टुकड़े कर डाला है।

जहा०—कितनीही दफ़ा कह चुकी हूं। भाई, सावधान ! तुमने कितनींही झिड़कियां दीं, डांटे बताईं, तिरस्कार किया, तब भी कहती रही हूं कि और'गजेब यह मत भूलो, कि जननी जन्म भूमिके अमृत पूर्ण दो स्तन पीकर ही हिन्दू और मुसलमान दोनों पले और पुष्ट हुए हैं और हो रहे हैं। तुमने सुनकर भी नहीं सुना। सिर्फ यही कहा कि "एक हाथमें तलवार और दूसरे हाथमें कुरान—यही महम्मद साहबका हुक्म है। काफिरोंको क़त्ल करना ही सच्चे मुसलमानका कार्य है।"



औरंग०—तब समझमें नहीं आया था, कि काफिरके माने हिन्दू नहीं है; पार्सी नहीं है; क्रिस्तान नहीं है—काफिरके माने हैं जिसे धर्मपर विश्वास न हो। जिसके चरित्र हैं, हृदयमें धर्म है वह चाहे हिन्दू हो चाहे पार्सी हो; चाहे क्रिस्तान हो—वह काफिर नहीं है; वह मुहम्मद साहबका प्यारा है। हाय अधूरी शिक्षा, तूने इतने दिनके बाद ज्ञान दिया—क्या करूँ! खुदाकी यही मर्जी थी!

जहा०—अधिक उत्तेजना होनेपर उसका फल बुरा हो सकता है। स्थिर होइए बादशाह सलामत!

औरंग—जहानारा, मौतके सागरमें मेरे जीवनकी नाव बह रही है, अब भला-बुरा फल क्या है? मंगल अमंगल क्या है? बहन, जीवनकी अन्तिम सीमामें तुम्हारे पुण्यकी पवित्र किरणें मेरे हृदयमें नया प्रकाश डाल रही हैं। अब मैं हिन्दुओंका शत्रु नहीं हूं। इसीको सच साबित करनेके लिये मैंने मरहट्टे वीर राजारामको यहां बुलवाया है। उनके साथ सुलहकी तैयारी हो गई है! मैं उन्हींके आनेकी राह देख रहा हूं, इसी जगह भेंट करूंगा।

(खोजाका प्रवेश)

खोजा—जहांपनाह, दक्खिनके राजा राजाराम आये हुए हैं।

औरंग०—उनसे मेरा सलाम कहो। पहरेदार, कासिम खां कैदीको यहां हाजिर कर।—जहानारा, भीतर महलमें जाओ

जहा०—(जाते समय स्वगत) खुदा तुम्हारी यह कैसी इच्छा

है! हिन्दुस्तान के बादशाहको क़ब्रके ऊपर खड़ा करके यह क्या अभिनयकर रहो हो! जिस हाथमें बेरहम तलवार दी थी, उसी हाथमें आज अपना कोमल आशीर्वाद दे रहे हो, जो हृदय पत्थर से गढ़ा था, उसीसे स्नेह और दयाका झरना बहा रहे हो?

(प्रस्थान)

(राजारामका प्रवेश)

राजा०—(सलाम करके) मेरा सलाम ग्रहण कीजिए बादशाह सलामत!

औरंग—खुदा तुम्हारी बड़ी उम्र कर। सुलहनामेपर दस्तख़त होगये?

राजा०—हाँ जहांपनाह। मगर इसीके लिये तो मुझे बुलानेकी विशेष आवश्यकता नहीं थी जनाब!

औरंग०-और भी प्रयोजन है। मरहठे वीर-महाराज; मेरे सेनापति कासिम खांने मेरे राज्यको बहुत कुछ हानि पहुंचाई है। आपका भी सर्वनाश उसने किया हैं। आप मेरे सामने खुद उसका विचार करें। इसीलिए मैंने आपको यहां बुलाया हैं,

(कैदी कासिम खांको लेकर सिपाहियोंका प्रवेश)

राजा०—यह क्या, यह क्या—यह यहांपर क्यों लाया गया है? माफ़ कीजिए जहाँपनाह—इसके सामने ठहरनेका अनुरोध न कीजिएगा।

औरंग०—आप अपनी इच्छाके माफिक इसे दण्ड दे सकते हैं।

राजा०—पृथ्वीपर जन्म लेकर मैंने खुद बहुत कुछ दण्ड भोगा है और दण्ड देना मैं नहीं चाहता। अगर मेरी रायसे इसका विचार हो, तो हुजूर इसे छुटकारा दे दीजिये, मैं इसके लिये और दण्ड नहीं चाहता।

औरंग०—यह क्या आप हंसी कर रहे हैं?

राजा०—नहीं, हंसी नहीं कर रहा हूं। मैं जानता हूं इसने सैकड़ों महापाप किये है, मेरे महाराष्ट्र देशके घरमें घरमें आग जलाई है। लेकिन बादशाह सलामत, पुण्यने जिसे पैरोंसे ठेल दिया है, महापापमें जो डूबा हुआ है वह क्या दयाका पात्र नहीं है अन्नहीनको देखकर अगर करुणाका उद्रेक होता है तो पुण्यहीनको देखकर उसपर दया क्यों न उत्पन्न होगी! शारीरिक रोगसे पीड़ित मनुष्य अगर सहानुभूति पाता है, तो जिसकी मनकी सब प्रवृत्तियोंको पक्षाघत रोग (लोकवेकी बीमारी) ने बिगाड़ दिया हैं, वह क्या सहानुभूति नहीं पा सकता?—बादशाह सलामत, इसे लोकसे हटाइयेगा नहीं!

औरंग०—जानता हैं, आज तू किस अपराधसे कैदी है?

कासिम—बादशाहका काम तन-मन लगाकर करता था, बादशाहकी भलाईके लिये इन हाथोंमें तलवार पकड़ी थी, उस तलवारसे दुशमनोंको मारा है। मेरा क्या अपराध हैं, सो तो मैं नहीं जानता खुदावन्द!

औरंग०—तेरा अपराध बहुत बड़ा हैं। तूने बेकुसूरोंको सताया है सैकड़ों बच्चोंको क़त्ल किया है, सैकड़ों औरतोंका

ख़ून किया है मुसलमानी दण्ड विधिके अनुसार तेरे लिए फांसी की ही सज़ा मुनासिब है।

कासिम—जानता हूं जहांपनाह, दुनियामें रहनेके मेरे दिन पूरे हो गये, जहन्नुममें जानेका वक्त आ गया है। लेकिन वहां जानेसे पहले, आखिरी सांस निकलनेके पहले, गुलामकी एक अर्ज है—हुक्म हो तो कहूं।

औरंग०—कह सकता है।

कासिम—जहांपनाह, मेरी ज़ायदाद सरकारी खजानेमें ज़ब्त हो कर जमा हो गई है; मैं भी मरने जा रहा हूं। लेकिन जहां—पनाह एक बुड्ढा—जिसके बाल पक गये हैं आंखोंसे देख नहीं पड़ता, चलनेकी ताकत नहीं बाक़ी है—उसके लिए एक टुकड़ा रोटीका, खुदावन्द, एक टुकड़ा रोटीका बन्दोवस्त कर दीजिएगा तो गुलाम वेफ़िक्र होकर सुखकी मौत मर सकेगा!

औरंग०—तू यह किसके बारेमें कह रहा है?

कासिम—मेरे अस्सी बरसके बूढ़े अन्धे बाप अभी जिन्दा हैं; उन्हींके बारेमें यह अर्ज कर रहा हूं जहांपनाह।

राजा०—बादशाह सलामत; मैं विनती करता हूं; हाथ जोड़-कर भीख मांगता हूं; कैदीको छोड़ दीजिए! कैदीको न माफ़ कीजिए; उसके वृद्ध पिताको क्षमा कीजिए—क्षमा कीजिए; हुजूर, क्षमा कीजिए! अगर यथार्थ ही मुग़ल सम्राट् हम हिन्दुओंको अब घृणाकी दृष्टिसे नहीं देखते; तो उसके चिन्हके तौर पर मुझे आज्ञा दीजिए कि मैं अपने हाथसे कैदीको बन्धनमुक्त कर



दूं ! जाओ कासिम, तुम अपने वृद्ध पिताकी आँखोंकी ज्योति और हृदयके आनन्द हो—जाओ, अपने वृद्ध पिताके हृदयमें आश्रय ग्रहण करो।

[कासिमको बन्धन—मुक्त कर देना]

औरंग०—वीर और उदार महाराष्ट्रपति, इतने दिनके बाद समझा कि क्यों आपके नामसे महाराष्ट्रदेशके घर घरमें बिजली की शक्तिकी तरह, नये जीवनकी अपूर्व धारा बहने लगी है—किस गुणसे आपने मरहठोंको मुग्धकर रक्खा है। मैं भी इस अचिन्तनीय दुर्लभ सुयोग को वृथा न जाने दूंगा। मुग़लों और मरहठोंका यह महासम्मिलन चिरस्मरणीय बना रखनेके मतलब से आज मैं आपके भतीजे शाहुको कैदसे रिहा करता हूं।

राजा०—क्या कहा जहांपनाह—शाहू छूट गया—शिवाजीके वंश मिटनेका खटका दूर होगया ! माताके रक्तपातसे जिस विप्लवकी सूचना हुई थी—माता हीके आशीर्वादसे आज उसकी शान्ति होगई ! साध्वीशिरोमणि चण्डीबाई, आज सतीलोकसे देखो माता ! जिस पुत्रके लिये तुमने नश्वर शरीर छोड़ दिया था; वही तुम्हारे हृदयका धन आज—तुम्हारे ही पुण्यसे—तुम्हारी ही तरह पुण्यमयी, तुम्हारी प्यारी जन्मभूमिकी गोदमें लौट कर जा रहा है। बादशाह सलामत, पितृदेवका यह पवित्र राजमुकुट लीजिये; अपने हाथसे शाहूके मस्तकपर रख दीजिएगा।

औरंग०—यह क्या महाराष्ट्रपति !

राजा०—अब मुझे महाराष्ट्रपति कहकर न पुकारिए ? धरो-

हरकी तरह प्राणपण यत्नसे जो राज्यभार अब तक मैं अपने सिर पर लादे हुए था, आज वह मैं उसके सच्चे अधिकारी को लौटा कर दे सका—यही मेरे लिए यथेष्ट है! मेरा अब यहांका काम पूरा हो गया है--प्रार्थना करता हूं, आपके साम्राज्यमें सदा शान्ति विराजमान रहे।

[तानाजीका प्रवेश]

तानाजी—जहांपनाह, यही तुम्हारी हिन्दू प्रजा है! हिन्दुओंका हृदय देखो, उनकी धर्म परायणता देखो—उनका मनुष्यत्व देखो! वत्स राजाराम, तुम मनुष्य नहीं—देवता हो; आओ, तुम्हारे साथ साधनाके पथमें अग्रसर हों।



